Date :

Chapter-6

===

: षष्ठ अध्याय :

: मटियानीजी के उपन्यासों में नवीन भाषा-शिल्प

एवं

भाषा - शैली :

===

:: षष्ठ अध्याय ::

: मटियानीजी के उपन्यासों में नवीन भाषा-शिल्प एवं भाषा-शैली :

प्रास्ताविक :

अन्ततः भाषा ही वह हxxxx×है×x× हथियार है, औजार है, माध्यम है जिसके द्वारा कोई लेखक या कवि अपने विचारों एवं भावों को अभिव्यक्त करता है। अतः किसी भी लेखक या कवि के लिए यह अत्यन्त आवश्यक हो जाता है कि उसका शब्दों पर, भाषा पर अधिकार हो। एक विशिष्ट प्रकार की भाषा के द्वारा, कहिए प्रशिष्ट भाषा के द्वारा, यह तो संभव है कि कोई अपना कवि-कर्म निभा ले जाए; किन्तु× या फिर एक विशिष्ट या सीमित परिवेश को लेकर औपन्यासिक-कर्म भी निभा ले जाए; परन्तु जिन लेखकों का परिवेश

व्यापक है , जिनका रचना-संसार चारों तरफ फैला हुआ है , जो व्यापक और बड़ी चेतना और सामाजिक सरोकारों से वास्ता रखने वाले लेखक हैं , उनका काम तो ऐसी केवल प्रशिष्ट भाषा से चलनेवाला नहीं है , क्योंकि मटियानीजी की ही शब्दावली की प्रयोग करें तो यह "मुख बोलन्ती " भाषा है , "स्पोकन-लैंग्वेज " है , जो वस्तुतः भाषा नहीं "बानी " है , जो कोश-कोश पर परिवर्तित होती है और इसी औपन्यासिक भाषा को राल्फ फोक्स ने "मानव-जीवन का गद्य " ॥ प्रोज आफ मेन्स लाईफ ॥ कहा था , तो इस भाषा से वास्ता है प्रेमचन्द , रेणु , मटियानीजी जैसे लेखकों का , जहां भाषा के एक नहीं कई-कई स्तर , कई-कई रंग और रंग-छायाएं ॥ लेयर्स एण्ड शेड्स ॥ उपलब्ध होती हैं । प्रस्तुत अध्याय में हमारा उपक्रम मटियानीजी के उपन्यासों को केन्द्र में रखते हुए उसकी भाषिक-संरचना , नवीन भाषा-शिल्प एवं उनकी विभिन्न प्रकार की भाषा-शैलियों पर विचार करने का है । अतः इस अध्याय को भी हमने दो खण्डों में विभक्त किया है — ॥अ॥ मटियानीजी के उपन्यासों में उपलब्ध नवीन भाषा-शिल्प , और ॥ब॥ मटियानीजी के उपन्यासों में प्रयुक्त विभिन्न भाषा-शैलियों का अध्ययन । पंचम् अध्याय में नवीन भाषा-शिल्प को लेकर उसके कुछेक आयामों पर प्रकाश डाला है ; किन्तु वहां कई उपन्यास रह भी गये हैं । यहां प्रायः उनके सभी उपन्यासों को लिया गया है , दूसरे भाषा-शिल्प के कुछ दूसरे पक्षों पर भी विचार किया गया है । यहां जिन उपन्यासों को लिया गया है है उनमें मटियानीजी के ग्रामभित्तीय या कहिए आंचलिक उपन्यास , जैसे — "हौलदार" , " मानसरोवर के के हंस " , " चौथी मुट्ठी " , " एक मूठ सरसों " आदि-आदि ; तो दूसरी तरफ "बोरीवली से बोरीबन्दर तक " , " किस्सा नर्मदा-बेन गंगूबाई " , " कबूतरखाना" आदि बम्बइया-परिवेश के उपन्यास आते हैं ; तो तीसरी तरफ " आकाश कितना अनंत है " , " जलतरंग" ,

"माया सरोवर " , " चंद औरतों का शहर " जैसे अलग-अलग नगरीय परिवेश वाले उपन्यास हैं । यहाँ उनके नवीन भाषा-शिल्प को लेकर एक समग्र दृष्टि से विचार होगा ।

(अ) मटियानीजी के उपन्यासों में उपलब्ध नवीन भाषा-शिल्प :

सामाजिक सरोकार , यथार्थ की गहरी छानबीन आदि के रहते हुए भी उपन्यास अन्ततः तो काव्य या साहित्य ही है । यहाँ "काव्य" शब्द का प्रयोग हम उसके व्यापक अर्थों में किया गया है । संस्कृत में काव्य केवल कविता के लिए नहीं , प्रत्युत साहित्य की प्रत्येक विधा के लिए प्रयुक्त होता रहा है , यथा -- " काव्येषु रम्यं नाटकं " -- अर्थात् साहित्य के सभी प्रकारों में नाटक सुंदर है । अभिप्राय यह कि उपन्यास भी काव्य का ही एक प्रकार है । जो भी हो , उपन्यास का समाजशास्त्र से गहरा सरोकार होते हुए भी , वह शास्त्र नहीं , काव्य है , साहित्य है । फलतः उपन्यासकार अपने गद्य में कला का सन्निवेश करता ही है । उपन्यासकार की भाषा की पड़ताल के समय कसौटी का एक मानदण्ड यह भी रहना चाहिए कि कौन-से उपन्यासकार ने भाषा को कितना अपना नया योगदान दिया , उसे जो भाषा उसके पूर्व कथाकारों ने दी थी , उसमें उसने अपनी तरफ से और कितना जोड़ा , उसे और कितना आगे बढ़ाया , उसे कितने नये शब्द दिए , कितने नये विशेषणों , नये उपमानों , नये रूपकों से उसे नवाजा ? यहाँ इस अध्याय में उपर्युक्त शीर्षक के अंतर्गत इसीको देखने-परखने का हमारा उपक्रम है । पिछले अध्याय में नगरीय उपन्यासों की भाषा पर विचार करते हुए , कहीं-कहीं इसे जरा-तरा छू लिया है , किन्तु यहाँ समग्रतया उस पर विचार करने का हमारा प्रयास रहेगा ।

~~मटियानीजी के उपन्यासों में नये शब्द~~

मटियानीजी के उपन्यासों में नये शब्द-रूप :

यहां जब हम "नये शब्द" कहते हैं तो उसके सूचितार्थों को भी थोड़ा समझ लेना आवश्यक है । वैसे एक लेखक के अनुसार इस संसार में नया कुछ भी नहीं है — " नथिंग इज़ न्यू अण्डर थिस ग्रे स्काय । " — अर्थात् इस नीले आसमान के नीचे नया ऐसा कुछ भी नहीं है । जिसे हम नया कहते हैं, वह हमारे ज्ञान की सीमा है, या हो सकता है हम उसे नहीं जानते । इसमें ऐसे शब्द भी हो सकते हैं, जो हिन्दी के लिए नये हों, किन्तु कुमाऊंनी बोली में उनका प्रयोग आम तौर पर हो रहा हो । जैसे "कैंजा" शब्द "स्टेप-मधर" के लिए, या "इजा" शब्द मां के लिए, हिन्दी के लिए नये कहे जा सकते हैं । ऐसे ही कुछ ध्वनि-छायाएं हो सकती हैं, जैसे "लाचारदर्जी" । हिन्दी में "लाचारी" से तो सभी परिचित हैं, किन्तु यह "लाचारदर्जी" शब्द खास कुमाऊं में प्रयुक्त होता है और मटियानीजी में यह शब्द कई बार आये हैं । यहां इस तरह के कुछ शब्दों को सूचीस्थ किया गया है —

बुरूंश फूल, कुवचनिया, तराण /बल/, जुद्ध-विद्या, टेकुआ (पति का स्थान लेने वाला), जोंलहाथ /प्रणाम/, घोड़िया / घोड़े हांकने वाला /, अवेर, बैरिया /लोकगायक /, बड़ौड / बछड़ा/, बैर /छेद/, फसकिया /वार्ताप्रिय/, उपन्याठी /उपद्रवी/, ज्योटि /नाभि/, कफुली / प्रेयसी /, जोड़ /व्यंग्य-छंद/, सैंतुवा /पालने-वाला/, निगरगण्ड, दोछनिया स्वभाव, इजा/मां/, कुकाट/चीखें/, दनैला/कृषि का औजार /, बाखली, डंगरिया, जगरिया, बौज्यू /पिताजी/, तिखनिया मकान, बनखुस्याणी / जंगली मिर्च /, गौंत /गोमूत्र/, लाचारदर्जी, पेटाली /पेटवाली/, चुच/स्तन/, फिम /चटाई/, बूबू/दादा/, बफार /भाप/, मोहिल मन, ब्यारी /बहू/, जतिया /भैंसा/, मच्चार्पी /काली मिर्च की चाय/, गुपटौला /गोबर का

उपला/, अपन्यास /आत्मीयता/, बोकिया /बकरा/, दोयमचित्ती /द्विविधा/, मुख बोलन्ती /बोलचाल/, बत्याली /बकरी के गर्भ-धारण का समय/, थैसियत /दहशत-आशंका , गुज. थैसत /, ज्याठजू /जेठजी/, कैंजा /सौतेली माँ /, डैंखर /डाह/, क्युंनी /थनों के ऊपर का हिस्सा /, डिमैक / दिमाग /, बकमध्यायी /बकवास/, कच्यार /कीचड़/, पुन्तुरी /पोटली/, ठुली /बड़ी/, भेल /चूतड/, फौंल /गगरी/, बमकुली /ओछी और उद्दण्ड/, फचीना /आँचल/, गद्दुवा /कद्दू/, छोरमुल्या /मातृ-पितृविहीन/, दनर-फनर /बहुतायत-इफरात/, भिटौली /भाई बहन को भेंटने जाता है और अपने साथ उसे देने के लिए जो ले जाता है वह /, धाध /पुकार/, रिभड़ /बैलों की लड़ाई /, उज्रदारी /विरोध/, पराया-पंती /परायापन/, चेला /बेटा/, बड़भाई /बड़प्पन/, फुटखारिया /सिरफूटा/, दरसली /वास्तव में /, बोलियों /मजदूरों/, कम्पायमानता, ल्वार /लुहार , गुज. लवार /, इस्टूडण्टी , गुनहगारिता, लाज-ढकंत्री , इन्कारी , कनसांगली /कनखजूरा/, शैद /शायद/, हकीकती §हकीकत में §, छुतिया-पाल /रजस्वला पाली/, अदिन, असजीली /गर्भवती/, पगल्यौल /पागलपन/, दातुल /दातून /, थोरी , कटड़ा /भैंस का बच्चा/, खतगों / क्षत्रियों का गाँव /, स्वैगिरी /दाइन का काम/, झुटुका / अवैध गर्भ /, जनम-बैली / जनम-बांझ/, बौरा-णिज्यू / बहुरानी/, मुस्यार /खसम/, बिछुरा /चौका/, उताणी /आँधी/, क्रोधिल स्वरूप , शरीर-सेकन्ती , जतकाली /प्रसविनी/, डांडी /अर्थी/, मैत /मैका/, चानी /सिर की चांद /, अपैट /अशुभ/, डाडू /गहरा चम्मच/ , जौल /शोरबा/, फचैक /थप्पड़/, फटनिपन्ना /चालबाजी/, ~~xxxx~~ थुक्काफजीती , ममैड़ /माँ , गुज. माडी /, पोथिल /बच्चा/, लौंडियौली /लौंडियागिरी/, बच्चेदानी ~~xxxxx~~, /गर्भाशय/ आदि-आदि ।

इस तरह के शब्द कुमाऊं की पृष्ठभूमि वाले उपन्यासों में "दनर-फनर" मिलते हैं । यहां चौथी मुट्ठी" उपन्यास से कुछ शब्दों को सूचीस्थ किया गया है । हालांकि यहां हमने कम शब्दों को बताया है, क्योंकि अधिकांश शब्द "हौलदार" उपन्यास में आ गये हैं । यथा —

चेली /बेटी/, छिहाड़ी , दोफरी , ओ बबो / ओ बाप रे /, लमलेट, परचेत , सौर /ससुर/, दुष्टाई , मय खुलासे के , बीज-उखाड़ /वंश-नाशक/, निसाफी , सौरास /ससुराल/, पxxx पोथी /बेटी/, रैन दें /रहने दे /, मेजरनामा /शिकायत/, दहूली-कुकरी / ढिंगला-ढिंगली /, सत्-सामल /सतीत्व और देह /, पाली /रजस्वला-समय/, कनसांगलियां , फी रोज , रांगलो भाषा , इल्लत , चहा-रोटी , बच्चादानी , दो-बटिय T / दो राहा /, मादिन /मादा/, खर्चन-शीन , xxxxxxxxx लम्बायमान , हड़कुली , संझैती । [2] यहां कुछ शब्दों को देखिए । "निसाफी" उर्दू शब्द "इन्साफ़" से आया है , "इन्साफ़" से "इन्साफी" । हालांकि यह हिन्दी की प्रकृति नहीं है , तथापि कुमाऊं में इसका प्रयोग धड़ल्ले से होता है । इसी तरह "दुष्ट" से "दुष्टाई" प्रयोग भी हिन्दी की प्रकृति के विपरीत है । परन्तु "दुष्टता" के स्थान पर "दुष्टाई" प्रयोग कुमाऊं प्रदेश की देन है । इसी तरह "लंबायमान" प्रयोग भी विचित्र लग सकता है । "नर" का विपरीत लिंग "मादा" होता है , परन्तु यहां पुनः उसको स्त्रीलिंगी प्रत्यय "इन" लगाया गया है , यह भी कुमाऊंनी बोली का प्रभाव है ।

इस तरह के कुछ आंचलिक शब्द " एक मूठ सरसों" में भी मिलते हैं , जो इस प्रकार हैं — उदेखे जैसा लगना , कौंली-कौंली /कोमल-कोमल/, चिलमनंगी / एकदम निर्वस्त्र / , झूटकैली , पोथिली, मणमणाट / गुंज. गणगणाट , भुनभुनाहट /, असजीली , सैप /साहब/, छिल्लरफोक , छुतिया-पाली की चसक , घरिणी , रोपाई , झुझुल्कि

घंटुली /बच्ची/, महागुंडी , टोकुवा , बुढ़ियाकाल , जाते असोज में , खवाई , ठगुली , एकलकटुली , खसमटोकुवा, भिटौली की छापरी , कैंजा , बबाल-टलाई , पातरमण्डी आदि-आदि । [3] यहां भी शब्द-संख्या कम है कि बहुत से शब्द "हौलदार" में आ गए हैं । "मुखसरोवर-के हंस" भी आंचलिक उपन्यास है , परन्तु पुनरुक्ति-दोष से बचने के लिए उनका उल्लेख यहां हम नहीं कर रहे हैं ।

"नागवल्लरी" उपन्यास की पृष्ठभूमि कुमाऊं प्रदेश है । जि. अल्मोड़ा का भौंगांव नामक गांव यहां पर है , किन्तु उसका शिल्प आंचलिक नहीं है । प्रस्तुत उपन्यास से कतिपय श×× शब्दों के उदाहरण यहां प्रस्तुत है —

सीढ़ीनुमा खेत , औसला-पर्व , स्मृतिजीवी , खतड़ुआ /अग्निपर्व/, डूमैन / अछूत-गंध/ , मिथ्याग्रह , कुड़बुद्धि , गालीबकुआ, बुद्धभस , आशल-कुशल /कुशल-क्षेम/ , डुमियोल , अनुदानजीवी , चलन्तू, ताजिन्दगी आदि-आदि । [4] हिन्दी में अधिकांशतः "दुराग्रह" शब्द प्रचलित है , किन्तु "दुराग्रह" और "मिथ्याग्रह" में अर्थ-छायाओं की दृष्टि से कुछ अंतर है , जिसे मटियानीजी ने यहां लक्षित किया है । "डुमियोल" शब्द "चमरौटी" या "चमारड़ी" के लिए प्रयुक्त हुआ है , क्योंकि कुमाऊं में "चमार" के स्थान पर प्रायः "डोम" या "डूम" शब्द अधिक प्रचलित है । चमड़ा कमाने के कारण एक विशिष्ट प्रकार की गंध आती है जिसे "डूमैन" कहा जाता है । "नागवल्लरी" शब्द भी शायद हिन्दी-क्षेत्र के लिए नया हो सकता है । "नागवल्लरी"×ङसे× कहते×हैं×जो×प्रायः×कुमाऊं×× खास किस्म की "बेल" या लता होती है , जो प्रायः कुमाऊं की नदियों में पायी जाती है । यह "बेल" नदी-स्थित पत्थरों से लिपटती है और प्रायः उसमें सांप या नाग पाये जाते हैं । ×××× कदाचित् इसी लिए उसे "नागवल्लरी" कहा

जाता है । पहले इस उपन्यास का नाम "सर्पगंधा" भी इसी सबब था ।

"गोपुली गफूरन" पहाड़ी परिवेश के निम्नवर्गीय जीवन को रूपायित करने वाला उपन्यास है, अतः यहाँ भी कई ग्रामभित्तीय शब्द प्रयुक्त हुए हैं । यथा — जतिकाल /प्रसवकाल/, औरतखोर, कन-छिदाई, बबाल-टलाई, खसमोंवालियां, जौला / काले सोयाबीन की पतली खिचड़ी /, शिकार /मांस/, बीनार /गर्भवती/, बौल / मजदूरी /, लदौ /दावा/, खाँटी शहरी ।[5] यहाँ "औरतखोर" शब्द का प्रयोग उस व्यक्ति के लिए किया जाता है जिसकी औरतें मर जाती हैं । जिसके भाग्य में स्त्री-सुख नहीं होता है । ऐसे पुरुष से ~~ब्याह~~× ब्याह करने में स्त्रियां भी हिचकिचाती हैं । वैसे आमतौर पर जंगल में जाकर पशु-पक्षियों को जो मारा जाता है, उसे शिकार कहते हैं । परन्तु कुमाऊं प्रदेश में "मांस" या "मटन" के लिए भी "शिकार" शब्द का प्रयोग होता है ।

इसी प्रकार "जलतरंग", "बर्फ गिर चुकने के बाद", "रामकली" प्रभृति उपन्यासों में भी कुछेक नये शब्द-प्रयोग हुए हैं । यहाँ उन शब्दों को सूचीस्थ किया गया है —

निर्दोषता, संतता, नावबाजी, उम्रदां, अनिर्णितता, रायजनी, एहतियातन, कुत्तागिरी आदि-आदि ।;[6] चलन्तू, स्त्रीविहीनता, शरण्यता, परास्तता, खब्तीपन, चेतनाधुत्तता, तैयारशुदा, ढुलमुलता, दबिश, शोकार्तता, अचानकता, पुष्प-ऋतु /बसंत/, बकबकियापन, औरतगाहों, कंचनता, काषायता, ~~अष्टककार~~× अष्टककार ;[7] हुलफंकड़, खिलंडरी ;[8]

यहाँ मटियानीजी की एक प्रवृत्ति की ओर ध्यान आकृष्ट करना चाहता हूं । उन्होंने अपने उपन्यासों और कहानियों में कुछ विलक्षण प्रयोग किए हैं, जैसे सामान्यतया संस्कृत के कई भाववाची

शब्दों में "ता" प्रत्यय नहीं जुडता है, हिन्दी की प्रकृति वहां "पन" प्रत्यय लगाने की है, परंतु मटियानीजी वहां "ता" प्रत्यय लगाते हैं, यथा — शांतता, संतता, अयानकता, ढुलमुलता आदि-आदि। इसी तरह हिन्दी में प्रायः "रायशुमारी" शब्द है, जिसके लिए मटियानीजी "रायजनी" का प्रयोग करते हैं। "चेतना से युक्त" के लिए भाववाची शब्द गढ़ते हैं — "चेतनायुक्तता"। इस तरह पारंपरिक शब्द-प्रयोगों के स्थान पर कई बार वे नये शब्द गढ़ते हैं। "वेश्यालय" के लिए "औरतगाह" शब्द उनकी इसी प्रव* प्रवृत्ति को सूचित करता है।

"छोटे छोटे पक्षी" नामक उनका उपन्यास दिल्ली की पृष्ठभूमि पर आधारित है। उसमें भी कई नये और विलक्षण शब्द-प्रयोग हमें उपलब्ध होते हैं, जैसे —

उजबकपना, शाहखर्च, उलाहनेबाजी, दोस्तपरस्त, लंतरानियां / बड़ाइयां /, गिजा /शक्ति/, भविष्यनामा, नाशुक्रगुजारी, टुकड़हा, बौड़मपन, घटितता, फर्ज-अदायगी, टिचरानियां, गमजदगी, जलालत आदि-आदि।[9] जो लोग अपने मुंह मियां मिट्ठू बनते हैं और अपने बारे में लम्बी-चौड़ी हांकते रहते हैं उनकी ऐसी "बड़ाइयों" के लिए मटियानीजी ने "लंतरानियां" शब्द-प्रयोग किया है जो हिन्दी जगत के लिए शायद नया है। उसी प्रकार "जन्म-कुंडली" के लिए "भविष्यनामा" प्रयोग भी कुछ-कुछ विलक्षणता लिए हुए है। ऐसे ही "घटितता", "नाशुक्रगुजारी", "टिचरानियां" आदि शब्द-प्रयोग भी कुछ विलक्षण-से प्रतीत होते हैं।

ऐसे शब्द-प्रयोग उनके "चन्द औरतों का शहर" नामक उपन्यास में भी उपलब्ध होते हैं। जैसे — स्वयंवरा, शराबनोशी, औरतबाजी, टपी, स्मृतिजीविता, आत्मजीवी, स्टोन-टी, घंटिकावादन, कृशगात, स्वx स्वतिष्ठा, डालडाभक्षी, जनकपालिका,

शांतता , अवज्ञा-आंदोलन , मद्यविद्या , धुर पश्चिम , प्रकृतिदर्शी , सियासतदां , कियनिंग करना , पांव ~~क्षक्षक्ष~~ रपटना , इब्तदा फरमाना , शिलीभूत होना आदि-आदि ।[10] "स्वयंवर" शब्द से तो हम लोग परिचित हैं , किन्तु "स्वयंवरा" शब्द मटियानीजी की देन है । "स्वयंवर" के लिए प्रस्तुत कन्या के लिए आधुनिक संदर्भ में उन्होंने उसका प्रयोग किया है । अंग्रेजी ने हमें बहुत शब्द दिए हैं । ~~कई शब्द~~ "टची" उस व्यक्ति को कहा जाता है जिसका हृदय बड़ा कोमल होता है और जरा-सी बात भी जिसे कई बार व्यथित कर जाती है । "हृदयस्पर्शी" के लिए भी कई बार इसका प्रयाग होता है, जैसे "यह सीन बड़ा टची है " । पहाड़ों में एक विशिष्ट किस्म की चाय को "स्टोन-टी" कहा जाता है । ऐसे "प्रतिष्ठा" शब्द से तो हम सब लोग भलीभांति अभिज्ञ हैं , किन्तु उसके लिए "स्वतिष्ठा" शब्द कुछ नवीनता और विलक्षणता लिए हुए हैं । "असहयोग-आंदोलन" अधिक प्रचलित है । उसके स्थान पर "अवज्ञा-आंदोलन " भी कुछ नव्यता लिए हुए है । "ठेठ पश्चिम" के लिए "धुर पश्चिम" शब्द प्रयुक्त हुआ है । उसी प्रकार "राजनीतिज्ञ" के लिए "सियासतदां" और "जड़ता" के लिए "शिलीभूत" होना शब्द-प्रयोग भी कुछ नव्यता ले आते हैं ।" इश्क की इब्तदा फरमाना " , "कियनिंग करना " जैसे शब्द-~~प्र~~ प्रयोग भी विलक्षणता का निर्माण करते हैं ।

मटियानीजी के उपन्यासों में नये क्रिया-रूपों का प्रयोग :

"क्रिया" वाक्य का एक मुख्य अंग है । "क्रिया" के अभाव में कोई वाक्य पूरा हो ही नहीं सकता । कई बार हमें ऐसे वाक्य मिलते हैं जिनमें प्रत्यक्षतः आपको कोई क्रिया न मिले , परन्तु ध्यान से देखा जाए तो वहां भी क्रिया होती है , परन्तु वहां वह अध्याहार होती है । पूर्वापर संबंधों से उनका निर्धारण हो जाता है । किसी भी भाषा की समृद्धि और संपन्नता का मुख्य आधार उनके

क्रियारूप ही हैं । जैसे-जैसे कोई भाषा समृद्ध और विकसित होती जाती है, उसमें इस प्रकार के क्रिया-रूपों का आधिक्य बढ़ता जाता है । कोई भी व्याकरणविद यह भलीभांति जानता है कि धातुमूलक भाषाओं में क्रियाएं धातु से निर्मित होती है । "धातु" क्रिया का संक्षिप्ततम रूप है । हिन्दी में उसमें "ना" जोड़ने से तथा गुजराती में "वुं" जोड़ने से क्रिया-रूप का निर्माण होता है, यथा -- "पढ़" धातु से "पढ़ना", "लख" धातु से "लखवुं" (गुजराती) आदि-आदि । भाषा में प्रायः 95 प्रतिशत क्रियाएं धातु द्वारा निर्मित होती हैं, परन्तु जैसा कि पहले कहा गया है, जैसे-जैसे भाषा विकसित होती जाती है उसमें संज्ञा विशेषण आदि से भी नयी क्रियाओं का निर्माण होता जाता है । हिन्दी में "नामधातु" क्रियाएं इस तरह की हैं, जैसे "बात" से "बतियाना", "गाली" से गरियाना", "पत" (प्रतीति) से "पतियाना", "लात" से "लतियाना" आदि-आदि । अंग्रेजी में तो यह प्रवृत्ति बहुत ही बढ़े-चढ़े रूप में मिलती है, यथा -- "बुक" से "टु बुक", "केटेगरी" से "केटेराइज्ड", "नेम" से "टु नेम", "पेन" से "टु पेन" आदि-आदि । "ही हेड रिटन धिस बुक" के स्थान पर कहा जाएगा -- "ही हेड पेन्ड धिस बुक" । मटियानीजी में भी यह प्रवृत्ति खूब मिलती है । उन्होंने भी अनेक संज्ञा-रूपों को "किया-रूपों" में क्रियान्वित किया है । यहां हमारा उपक्रम कुछ उस प्रकार के क्रिया-रूपों पर प्रकाश डालना है, जिनका प्रयोग मटियानी जी के उपन्यासों में बहुतायत से हुआ है ।

मटियानीजी का "एक मूठ सरसों" उपन्यास कुमाऊं की पृष्ठभूमि पर आधारित है, अतः उसमें कुमाऊंनी बोली के प्रभाव-स्वरूप कई ऐसे किया-रूप आए हैं । यथा -- बिरबिराना, बात-बतंगड़ों से जी बिलमाना, थेच-थेच कर घर से निकालना, घिना जाना, पिड़ाना, रीत जाना, निंदियाने लगना, गू-मूत में फितोड़ना, सुख से लुरथुरा जाना, ततेरना, मलाशना, मूसे के

जैसे थोल×थुथुरxxxx× थुरथुराने xxxx लगना , (काम-काज में) हाथ मारना , होठों को हिलोर देना , मिन्नी-मिन्नी करना , खाई कराना , (दिन पर दिन) फाँटियाती जाना , दुरदुराना , रोष उपजना , बीज का अंकुराना , उफ्ना जाना , लठियाना ,×कंठ कंठ अखरता रहना , लमलेट छोड़कर जाना , स्मृतियों का आँखों में डबरा जाना , सरसों का पियराना आदि-आदि ।[11]

इसी तरह "चौथी मुट्ठी " उपन्यास भी कुमाऊँ की पृष्ठ-भूमि पर आधृत है , अतः उसमें भी कुछ इसी तरह के क्रिया-रूप उपलब्ध होते हैं । यथा -- नौराट-कौराट करना (बेचैनी होना), गुजबुजाना , पोंछना- पलाशना , कैलेजे का कुरकुराना , बमकना , बिछुलना , साँत को सहराना , (प्रताड़ना से) पथरा जाना , आँखों में झिरमिरी जैसा कुछ ढुलढुलाना , अटपटा जाना , भूख से लुतलुतान हो जाना , ग्लानि से xबिरx× बिरबिराना , मलाशना , धतियाने को दौड़ना , थिरा जाना , फौत होना , तरुणा जाना, मादिनों के उदर-लोमों का गुगबुगाना , अरुणा जाना आदि-आदि ।[12] "हौलदार" उपन्यास में भी कुछ ऐसे क्रिया-रूप मिलते हैं, यथा -- हेरना , पेरना , टिटियारना , अवतरणा , दीवारों को मतकाना आदि-आदि ।[13]

नगरीय परिवेश के उपन्यासों में भी ऐसे कई नये क्रिया-रूप उपलब्ध होते हैं । यहां कुछेक को सूचीस्थ किया जा रहा है -- रीतना , बर्फ का मिनमिनाना , ठूंगना , हुड़कना आदि आदि ।[14] "रामकली" उपन्यास में भी कुछ नये क्रिया-रूप मिलते हैं , जैसे "फिकर" पर से "फिकराना " , मृत्यु होने के लिए फौत होना , जबरदस्ती करने के लिए "जबरियाना" आदि-आदि ।[15] इसी तरह "नागवल्लरी" उपन्यास में सहेज जाना , भेल फटकाना , मछली-मारण , बिरारणा करना , रघोड़ना जैसे क्रिया -रूप मिलते हैं ।[16]

" चन्द औरतों का शहर " अल्मोड़ा की पृष्ठभूमि पर आधारित उपन्यास है । उसमें भी कतिपय ऐसे क्रिया-रूप मिलते हैं, xxxxxxxx यथा --- किचनिंग करना, पांव रपटना, इब्तदा फरमाना, एकान्त का निःशब्द बीत जाना, टोहना, किसी बात का उत्सव हो जाना, श्लिलीभूत होना, बीतता और बर्फ में होता हुआ, अपने रंडुवेपन को डिस्ट्रब्युट करना आदि-आदि ।[17]

"बर्फ गिर चुकने के बाद " उपन्यास की चर्चा तो भाषा के संदर्भ में अवश्य होती रही है । पूर्ववर्ती पृष्ठों में अनुसंधित्सु ने भी अनेकशः उसकी भाषा की सराहना की है । यहां उस उपन्यास से कतिपय नये क्रिया-रूपों को उल्लेखित किया गया है --- आकस्मिकता में फैल जाना, जाले में फंसी हुई मक्खी का भिनभिनाना, ठूंगना, आउट आफ फोकस जाकर डायलाग बोलना, कुत्तागिरी की कला सिद्ध करना, अपने आप का जस्टीफाय करना, दहशत से आब्सेस्ड होना, कुढ़न और घृणा में लिथड़ती हुई भाषा, असह्य क्रूरता में होना, सवालिया निशान लगाना, किसीका लूज़ कैरेक्टर हो जाना, भाषा की शरण्यता को पाना, बर्फ गिर चुकने के बाद की अलौकिकता में होना, वन्यलता की-सी अरण्यता में कांपना, xxxx सींग उगने से पहले की निरीहता और अबध्यता में रहना, खास पसंद के शब्दों को काफिये की तरह दोहराना, पहाड़ी शहरों को औरतगाहों में बदल देना, सातवें ककार में निदान ढूंढना, कब्रस्तान में पगुराती भैंस का खदेड़े जाना आदि-आदि ।[18]

यहां एक बात का उल्लेख करना अत्यावश्यक हो जाता है कि कि मटियानीजी कई बार क्रिया के आगे कुछ क्रिया-विशेषणों या उपमानों को रखकर सामान्य-सी लगने वाली क्रिया में भी एक अनोखा लावण्य भर देते हैं । "होना" एक सामान्य क्रिया है, पर "असह्य क्रूरता में होना " से उसमें एक प्रकार की विलक्षणता का समावेश हो जाता है ।

मटियानीजी के उपन्यासों में नये उपमानों का प्रयोग :

हम मटियानीजी के संदर्भ में पहले भी अनेक स्थानों पर निर्दिष्ट कर चुके हैं कि उनके भीतर का कवि उनके उपन्यासों में कई बार श्रुतिगोचर होता है । उनकी कहानियों तथा उपन्यासों में पाये जाने वाले कई-कई नये उपमान उसकी साक्षी पूरते हैं । यहां उनके कतिपय उपन्यासों में उपलब्ध नये उपमानों को प्रस्तुत करने का हमारा नम्र प्रयास है —

उपमेय उपमान उपन्यास

§1§ शैशव : सिटौले पंछी की तरह उड़ना : हौलदार / पृ.सं. 80 /

§2§ चर्चा : घुघुत पक्षी : वही : / पृ. 244 /

§3§ पंडिताइन का चरित्र : चलनी के छेद : / पृ. 244 / : वही

§4§ दुरगुली पंडिताइन का जोबन : लपलपाती काली नागिन को भी मात कर देने वाला किनारीदार जोबन : वही: /339/

§5§ मुकाबले में ललकारना : ~~बहेऱ~~ नदिया बै §सांड§ जैसी हू-हांक : वही : / 38 /

§6§ पसीने की गोल-गोल बूंदों का चमकना : धौलछीना के जैंगणियां कीड़ों का टिमटिमाना : वही : / 43 /

§7§ डुंगरसिंह की चलायमान गति : पूर्विया सुपारी का गोल दाना : वही : / 44 /

§8§ छातियां : गदुवा-फल §कद्दू§ : वही : / 133 /

§9§ कंपित कलेजा : फल्याँठ का पात : वही : / 191 /

§10§ हरकसिंह का परहोश-परकाम §मूर्छित और सुधिहीन§ हो आना : उस पोस्टमैन का आना जो चिट्ठीयों की थैली अपनी किसी कफुली §प्रेयसी§ के यहां छोड़ आता है : वही: /254 /

§11§ व्यंग्य एवं लांछनाओं की बात करना : गरम शक्कर-चासनी में जलेबियों का डूबोना : वही : /263/

क्रमांक : उपमेय : उपमान : उपन्यास व पृ. सं.

==

§12§ ईर्ष्या करना : छिलुक जैसे भ्वां-भ्वां जलना : हौलदार : 280

§13§ अनाप-शनाप बोलना : उमेदिया हुड़के के तबले को डबल रफ्तार से पीटना : वही : 301

§14§ उमादत्त की तीखी आवाज़ : डांस : वही : 340

§15§ लछिमा भौजी के वचन-बाण : मरी भैंसों को उधेड़-उधेड़कर खाने वाले लम्ब-गरदनिया गिद्ध : वही : 315

§16§ रूखा-सूखा ललाट : दरार पर पड़े कांच के टुकड़े : एक मूठ सरसों : 21 §

§17§ घृणा : बेड़ू कीx छिद्रीली लकड़ी में तीखे धुएं का भर जाना : वही : 23

§18§ सुंदर लड़का : राजा की मरत वाला रूपया : वही : 35

§19§ सुंदर लड़की : विक्टोरिया-छाप चांदी की अठन्नी : वही : 35

§20§ प्यारी संतान : सोनपंखी : वही : 97

§21§ प्यारा भाई : ~~xxx~~x सोनपंखी घुघुत : वही : 102

§22§ स्त्री के उदर में बच्चे का बढ़ना : पीली सरसों का पियराना : वही : 102

§23§ आंचल की चट्टानों पर अंगुलियां फिराना : बर्फीली हिमालय की चोटियों पर सूरज महाराज की अंगुलियों का फिरना : वही: 5

§24§ आंसू : पात अटके ओसकण : मुख सरोवर के हंस : 26

§25§ सुंदर काया : विजन-वल्लरी -सी देहयष्टि : वही : 82

§26§ कथा के श्रोतागण : कमलासनी भंवरे : वही : 180

§27§ शैशव : कौंली उमर : वही : 168

§28§ मोहिनी-सोहिनी तिरिया का हंसना : आधी रात में धूप का खिलना : 120

क्रमांक	: उपमेय	: उपमान	: उपन्यास व पृ.सं.

§29§ शक्ति-संपन्न पर कोमल हृदय अजित बफौल : शरीर से हिमाल , स्वभाव से पराल : मुख सरोवर के हंस : 183

§30§ वीर बालक अजित : दो मन खड़मासों की खिचड़ी का खवैया , जात का घोड़ा , औकात का बछड़ा : वही : 141

§31§ रानी रूपाली का बोलना : फूल-पंखुरियों में पैठे भंवरों का गुनगुनाना : वही : 15

§32§ लली दूधकेला का आंसू बहाना : ओस-बूंदों से भरे पिनालू के पातों को पलटना : वही : 132

§33§ रानी रूपाली की मोहक हंसी : नशे में उन्मत्त शराबी के हाथों से लबालब भरी प्याली का छलकना : वही : 78

§34§ महाराजा कालिचन्द का महारानी भद्रा की सेज सोना : दिनभर थके-चले यात्री का शीतल चांदनी में सोना : वही : 68

§35§ आंसू : मसूर के दाने : चौथी मुट्ठी : 7

§36§ स्तन : पपीते , पत्थर : वही : 28

§37§ बांझ औरत : लट्ठ-मूसल : 34 : वही

§38§ दुःखती बातें : कनसांगलियां : वही : 34

§39§ चिकनी-चुपड़ी बातें : बक्खरदार चासनी : वही : 24

§40§ नवयौवन : खिला हुआ सूरजमुखी : वही : 56

§41§ वृद्धावस्था की चमक : कांसे की थाली का चमचमाना : वही: 63

§42§ दुःखी स्त्री : कसाई की रेती हुई गाय : वही : 91

§43§ आंसू : शिवलिंग के ऊपर लटके घड़े की पानी की बूंदें : वही : 100

§44§ आंसू : सच्चे मोती : वही : 140

§45§ बढ़ती कन्या : नलतुरे की छड़ी , कांसे की कटोरी : वही: 148

§46§ छाती का संताप : गीली लकड़ियों का सुलगना : वही : 123

क्रमांक	उपमेय	उपमान	उपन्यास व पृ.सं.

§47§ कन्या : चौमसिया कांस : वही : 149

§48§ मन को सालने वाला दुःख : कीड़ा : वही : 50

§49§ यशोदा सासू के केश-कलाप में आगे का सफेद गुच्छा : चंवर गाय की सफेद पूंछ : वही : 47

§50§ कृतज्ञता जताने के लिए उत्सुक रहना : सूखी धरती पर मेंढ़क के कंठ की तरह बिलबिलाना : वही : 53

§51§ ग्लानि के स्थान पर चेहरे का गौरवपूर्ण ढंग से चमक उठना : काई की परत को काटते हुए महाश्वेता बतख का दूर तक निकल जाना : वही : 58

§52§ उसांसिल स्मृतियां : कलेजे के कोनों के कांटे निकालने वाली छोटी-सी चिमटियां : वही : 79

§53§ लाज-शरम के मारे खिलखिलाहट का होंठों पर ही अटक जाना : आंच पर से हटाते ही दूधका उफान का थिरा जाना :वही: 84

§54§ ज्यादा चलनेवाली जीभ : कलौंछ मछली का पानी पर उछलना : वही : ~~४~~ 82

§55§ लगातार दुःख से भभक उठना : खतड़ुआ की आग : वही : 98

§56§ दुःख : संताप के बादल : वही : 122

§57§ दुःख : छाती के बादल : वही : 122

§58§ बिना गोश्त-मछली के रोटी : तवा-परात : गोपुली गफूरन : 122

§59§ गोपुली : गुरबत के बीच का फूल : वही : 100

§60§ यौवन : भोर की ताजगी और अनाविलता : वही : 97

§61§ न गिरने वाला बच्चा : तितपाती के काढ़े को पचा लेनेवाला बच्चा : वही :~~x94~~ 93

§62§ थककर सो जाना : तलाब में का-सा डूबना : वही : 115

क्रमांक :	उपमेय	: उपमान	: उपन्यास व पृ.सं.

§63§ कंपा देनेवाली ठंड : अजगर : आकाश कितना अनंत है : 7

§64§ पर्वतीय शहरों के लड़ाई-झगड़े : कुटीर-उद्योग : वही : 7

§65§ कोम्यूनिस्ट : लाल लंगूर : 88 वही : 86

§66§ अफवाहें : चुंइगम : वही : 15

§67§ हिन्दुस्तान के लोगों की जिन्दगी में कम्यूनिजम की स्थिति : आलुबुखारे के बंड़xबड़xx पेड़ पर टंगा हुआ लाल साईनबोर्ड : वही : 26-27

§68§ आकाश कितना अनंत है के कामरेड सूरज : द डान क्विक्जोट आफ द सिटी : वही : 29

§69§ अल्मोड़ा : मीडियाकरों का शहर : वही : 38

§70§ मुहब्बत या प्रेम, लड़की या औरत , चरित्र या रोमांस जैसे शब्द : उड़ते हुए चिड़ियों के झुण्ड : वही : 75

§71§ छोटे शहर की छोटी बात : बकरे की लेंडी : वही : 102

§72§ कुटिलता : ध्यानी पनवाड़ी ऐंठी हुई मूछों में केंचुओं का रेंगना : वही : 103

§73§ * राष्ट्रीय संकट : सिर्फ गरीबों पर पड़ने वाले संकट : वही: 137

§74§ उपन्यास की नायिका गीता पाल : वैवाहिक जीवन की निष्पातता से आद्यन्त आप्लावित स्त्री : वही : 172

§75§ विदेशी औरतें : सत्तर पार पहुंचकर भी शादी के दस्तानों के लिए हाथ खुला रखने वाली स्त्रियां : वही : 178

§76§ बिरले लोग : विरासत में "स्ट्रगल" को पाने वाले लोग : वही : 203

§77§ कुमाऊं प्रदेश में किसी के कवि होने की पहचान : सुमित्रानंदन पंत के साथ-साथ कविताई करना : वही : 236

§78§ इस देश के बनिया निजाम की "इकानोमी" : मायाबाजार : वही : 259

क्रमांक	: उपमेय	: उपमान	: उपन्यास व पृ. सं.

§80§× §79§ कामरेड सूरज का कभी-कभार भावुक हो उठना :
स्पुतनिक हो चलना : वही : 261

§80§ वक्त के साथ करवट बदलने वाला आदमी : "तू न सही , और
सही" की धुन गाउथ-आरगन पर निकालने वाला आदमी : वही:263

§81§ कवियों की जबान और कलम की नोंक से विप्लव की भाषा का
निकलना : हाथी की पीठ पर चीड़ की तीलियों का गिरना :
: वही : 276

§82§ कामरेड जैसे लोगों द्वारा अखबार निकालने से इस बनिये निजाम
पर पड़ने वाला असर : पहाड़ पर मक्खी का जा बैठना : वही: 277

§83§ सियासी लोग : बड़ी हरामी किस्म की चीज़ : वही : 314

§84§ औरत : कोहरा : छोटे छोटे पक्षी : 18

§85§ घरवाली : अण्डा देने वाली मुर्गी / : वही : पृ. 33

§86§ अँधेरे का गहराना : नालों के पानी से नदी का बाढ़ में होते
जाना : वही :60

§87§ रेल का सफर : सदियों में कुत्तों का एक-दूसरे की टांगों में
घुसे रहना : वही :72

§88§ रेलगाड़ी : भूकम्प के वक्त बच्चे को लेकर भागती औरत : वही:73

§89§ चश्मेवाला पत्रकार : छः आँखों वाला जीव : वही : 105

§90§ प्रेम : गंधर्व कर्म : वही : 108

§91§ अनिश्चित व्यक्तित्व : मुंडा सांप

§92§ बारिश में धुला शहर : किसी दूध पीते बच्चे का उसकी मां के द्वारा
आंगन में छोड़ जाना : चन्द औरतों का शहर : 22

§93§ लोगों की नज़रें : ~~बह~~ घावों पर बैठने को बेचैन मक्खियां : वही
पृ. 55

क्रमांक	उपमेय	उपमान	उपन्यास व पृ. सं.

§94§ देवदार- चीड़ का वृक्ष : तेजस्वी ऋषि के मस्तक पर की गोखुरी चुटिया : चन्द औरतों का शहर : 83

§95§ शिखर पर का ध्वज : छत पर से उड़ाई गई पतंग : वही : 84

§96§ पाकर के अपेक्षाकृत छोटे कद के वृक्ष : मेले में सयानों की अंगुली थामे चलते बच्चे : वही : 86

§97§ पुण्यक्षीण व्यक्ति का पितृ-तरपण : कोढ़ी का धूप में बैठना : वही : 90

§98§ टोप : अफसरी का अxxभिxxxx आभिजात्य प्रकट करने वाला साधन : वही : 92

§99§ बर्फ : आसमान के फूलों की पंखुड़ियां : वही : 96

§100§ कोहरे से लिपटे चीड़ के ऊंचे वृक्ष : xxxxxxxxxx मां की आंचल के ओट में सोयें नवजात शिशु : नागवल्लरी : 9

§101§ गांधी टोपरि : कागज की नाव : वही : 13

§102§ बिना कुर्सी का नेता : पतझड़ का वृक्ष : वही : 13

§103§ सुसुर-फुसुर : तिनके का नदी में गिरना : वही : 15

§104§ सन्नाटे का फैलना : दरी का बिछना : वही : 23

§105§ पहाड़ियों पर की धूप : बिदा होती वधू का आंचल : वही : 36

§106§ गंवार औरतों का बातें करना : मक्खियों का भिनभिनाना : वही : 65

§107§ हंसना : जुगनुओं का झिलमिलाना : वही : 80

§108§ गालियां देना : पत्थरों से भरी जेबें खाली करना : वही: 82

§109§ गोविन्द वल्लभ पंत : पर्वतीय जगत के चाणक्य : वही : 89

==

क्रमांक : उपमेय : उपमान : उपन्यास व पृ. सं.

==

§110§ धूप : धतूरा का फूल : नागवल्लरी : 98

§111§ स्तन : टिमटिमाते दीपक जैसे कलश : एक मूठ सरसों : 3

§112§ बेटी : अपनी ही बोटी : वही : 16

§113§ दिन : कौली ककड़ी की पुड़यां : वही : 32

§114§ किसी स्त्री का गदराना : मुस्टण्डी पिनालुओं का गेंडेरी के पातों की तरह चौड़ी-चुपड़ी होते जाना : वही : 73

§115§ मुलायम नौनी : मछली जैसा फड़x फड़कने वाला सपना : चौथी मुट्ठी : 15

§116§ उरोज : कनफल के दाने : वही : 22

§117§ भिमुली भौजी के पिता रीठागढ़ के प्रसिद्ध लोकगायक टीकमसिंह : अलमोड़ा शहर की रसवंती-रूपवंती बौरापियों की सौन्दर्य-उज्जयिनी के कालिदास : हौलदार : 14

§118§ गांव की पंचैत : शेर-सियारों की एक पंगत : वही : 26

§119§ खिमुली-भिमुली जैसी भौजियों के गांव में रहना : दांत तले का रहना : वही : 29

§120§ ऐसी गाय जो कभी ब्याई न हो : जनम-बैल गाय : वही: 59

§121§ डूंगरसिंह के बारे में भौजियों का खयाल : बकरी की बत्वाली § गर्भ - धारण का समय § की इन्तजारी न करने वाला बोकिया : : वही : 83

§122§ डूंगरसिंह : कच्चे केलों को पकाने की तरकीब जानने वाला व्यक्ति : वही : 83

§123§ पर्वतों की गाछ-बहुल नदियां : हिमालय की हिम-कल्लोलिनी बेटियां - पार्वतियां : वही : 140

§124§ धौलछीना वासियों के लिए सुयाल / एक नदी / : मायके में पले हाथों से ससुराल को संवारने वाली बेटी : वही : 141

क्रमांक	उपमेय	उपमान	उपन्यास व पृ. सं.

§125§ बच्चेदानी में स्थित बच्चा : चितलू मछली का बच्चा : हौलदार: : 161

§126§ कलेजे में धुकधुकी होना : किसन मिस्त्री के आरे का चलना : वही : 189

§127§ धौलछीना के लोगों की चटखोर जीभ : तेज मिर्च-मसाले वाली दाड़िम की खटाई : वही : 214

§128§ गोपुली काकी की लटी : चुतरौले की पूंछ : वही : 249

§129§ चट्टआ जबान : करीम मास्टर का लमखरा : चौथी मुट्ठी : वही : 15

§130§ अपनी जगह जमे रहना : नंदामैया के मंदिर के अडिग पथरौटे होना : वही : 22

§131§ दुनिया की जुबान से निकले हुए बोल : दो-नाली बंदूक के कारतूस : वही : 29

§132§ झुर्रियां : सूखी तोरई के रेशे : वही : वही : 58

§133§ कुण्ठा : पीड़ाओं की लीद : वही :76

§134§ चूजे : आंसुओं के लच्छे : वही : 99

§135 § अजनबीपन : जंगली खरगोश : जलतरंग : 8

§136§ मुस्कुराहट : केले के पत्तों पर फैला हुआ जल : वही : 11

§137§ हविश : मक्खियां : वही : 23

§138§ अंधेरा : गाढ़ा कोलतार : वही : 31

§139§ स्तन : वन-कपोत : वही : 49

§140§ जीवन : एक लम्बी मौत : वही : 56

§141§ अंतरात्मा की आवाज : गुफाओं में गूंजने वाली प्रतिध्वनियां : वही : 64

§142§ एब्नोर्मलीटी का टैंशन : आल्कोहालिक ड्रिंक : वही : 74

क्रमांक :	उपमेय	: उपमान	: उपन्यास व पृ. सं.

§143§ किसिंग-विसिंग तक का प्रेम : विटामीन सी : बर्फ गिर चुकने के बाद : पृ. 14

§144§ आकांक्षा : कांच का खूबसूरत खिलौना : वही : 18

§145§ आकाश : अंतहीन समुद्र : वही : 19

§146§ ऊँचे वृक्ष : अप्सराओं के आलिंगन से मुक्त तपस्वी : वही : 23

§147§ घाटियां : गहरी नींद में विवस्त्र सुंदरियां : वही : 22

§148§ स्त्री-संसर्ग से मुक्त होना : कोहरा हटे बाद का वृक्ष : वही: 24

§149§ प्रेम-कहानी की याद : खून के थक्के : वही : 31

§150§ अपने लिए प्रयुक्त भाषा : गूँगे की जिह्वा : वही : 32

§151§ भाषा : एक यात्रा : वही : 52

§152§ प्रेमविहीन स्त्री : भैंस : वही : 87

§153§ करुणा : मनुष्य की सबसे ज्यादा गहरी और व्यापक सनातन भाषा : वही : 101

§154§ कवि : खटमल : किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई : 2

§155§ योनि : सौन्दर्य और सौष्ठव का शतदल : वही : 17

§156§ वासना : खुजली : वही : 17

§157§ सेठानी नर्मदाबेन का प्यार : शानदार लोन में खेली जानेवाली टेनिस : वही : 27

§158§ घड़ी : फावरल्यूबा की बेटी : वही : 48

§159§ प्यार : एक इण्टर्व्यू जिसमें परीक्षा कोई दे और पास कोई और हो : वही : 56

§160§ गरीबों की माँ-बहन : कमाठीपुरा की रण्डी : वही : 60

§161§ किसीको सेठानी नर्मदाबेन के प्यार का मिलना : "केसव-भिकाजी " होटल में उसल-पाव-भजिया - बटाटा-बड़ा खाने वाले को अचानक "पुरोहित" में शानदार डिनर मिलना : 77

मटियानीजी के उपन्यासों में नये विशेषणों का प्रयोग :

भाषा में शब्द या संज्ञा की विशेषता बताने वाले पद को "विशेषण" कहा जाता है । हमारी रोजमर्रा की भाषा में न जाने हम कितने ही विशेषणों का प्रयोग करते हैं । लेखक या कवि की एक विशेषता उसके विशेषण-प्रयोग में भी देखी जा सकती है । संस्कृत-कवियों में बाणभट्ट को "विशेषणों का कवि " कहा जाता है । एक संज्ञा के आगे वे कई बार विशेषणों की झड़ी-सी लगा देते थे । इस प्रकार के प्रयोग को "विशेषण-पदबंध " कहा जाता है । उदाहरणतया "तेरे काले कजरारे सुंदर , मादक , मदिर , अहेरी , आल्कोहा`लिक नयन " । यहां "नयन" से पहले आठ विशेषण रखे हुए हैं । "मालोपमा अलंकार की भांति यहां विशेषणों की एक माला उपलब्ध होती है । इसी तरह विशेषणों के विशिष्ट प्रयोग से एक अलंकार निर्मित होता है , जो हमारे साहित्य में अंग्रेजी कविता के प्रभाव-स्वरूप आया है , उसे "विशेषण-विपर्यय " ~~अलंकार~~ (ट्रान्सफर्ड एपिथेट) अलंकार कहते हैं । जैसे उदाहरण के तौर पर हम "अंगली" शब्द लें , तो "बड़ी अंगली" , " छोटी अंगली " , " काली अंगली" , "गोरी अंगली" , " मोटी अंगली " , " पतली अंगली " , " टेढ़ी अंगलि" "सीधी अंगली" जैसे विशेषण तो हमें मिल जायेंगे ; पर यदि कोई कहता है — " पापी अंगली" , "निर्दय अंगली" , "अदेखिया अंगली" , "साहसी अंगली" तो ऐसे विशेषणों के प्रयोग को विशिष्ट ही कहा जायेगा । मटियानीजी के भीतर का कवि उनके कथा-साहित्य में भी इधर-उधर झलकता रहता है , जिसे हम नये विशेषणों के संदर्भ में लक्षित कर सकते हैं । उनकी नवीन भाषाभिव्यंजना यहां देखी जा सकती है । यहां इस शीर्षक के अन्तर्गत इस तरह के कुछ विशेषणों को छांटने का हमारा उपक्रम है । वैसे तो इस तरह के प्रयोग उनके सभी उपन्यासों में मिलते हैं , परंतु यहां कुछेक उपन्यासों के आधार पर उनकी इस विशेषता को लक्षित किया गया है ।

PlTh 11417

नामाकूल-सा चितकबरापन , धनुषाकार शहर , कम्युनिस्ट पीरियड , अनाक्रमक किस्म की-सी सरलता , क्रिश्चियन वोक्यूबलरी , सलेटी पत्थरों का शहर , जंगलनुमा बनावट , तकलीफभरी मुस्कुराहट, प्रस्तर-वृक्ष , बंदरनुमा औत्सुक्य , द्विभुज वृक्ष , वृद्धावस्था के तेज में दीपता मुखमंडल , सूफियाना किस्म की असंलग्नता और लापरवाही , विलक्षण-सी स्निग्धता , तकलीफदेह विस्फोट के पहले का सन्नाटा , दमित आक्रोश , पृथुल स्तन , मसीही गंध , खिलखिलाते लय मेंहोता मार्था का वक्ष , बौद्धिक आभिजात्य , दीर्घगात वृक्ष , मुसीबतजदा औरत , दुग्धपृथुल स्तन , निष्णात स्वर , समाजी खुलापन , कोमल स्मिति , अरण्य की श्वासनलिका-सी सुरंग , कीलठुके हाथ , अपने चाक्रवर्त्य में गुत्थमगुत्थ होते बादल आदि-आदि । [19]

यह पहले भी कहा जा चुका है कि "बर्फ गिर चुकने के बाद " भाषिक-संरचना की दृष्टि से मटियानीजी का एक महत्त्वपूर्ण उपन्यास है । उसमें इस तरह के विशेषण पुष्कल परिमाण में मिलते हैं । यथा — रहस्यमय भयावहता , ममी की-सी ताजगी , विलक्षण-सी संक्षिप्तता , शब्दातीत कारुणिकता , शब्दातीत आर्द्रता , अंतहीन तकलीफ , आदिम क्रूरता , नंगेपन को नियामत समझने की अभ्यस्तता, स्नान-निवृत्त तपस्वियों की-सी पवित्रता , दुर्दान्त मृत्युगंध , पशु-दुर्लभ घृणा , अकूत भयावहता , गूंगे की-सी भाषा-विहीनता , अकूत नीलापन , सपाट सादापन , तैयारशुदा जबान , सवालिया निशान , क्लियोपेत्रा की-सी साम्राज्यलोलुपता , अकूत अरण्यता , वन्यलता की-सी अरण्यता , सद्यस्नाता संन्यासिनियों-सी ताजगी और पवित्रता , सम्मोहक पवित्रता , स्मृतियों का गर्भगृह , सींग फूटने से पहले की निरीहता और अबध्यता , चूडान्त यातना , उत्पीड़क अहसास , दम्यानि कद की औरत आदि-आदि ।[20]

इसी प्रकार के नये विशेषण "आकाश कितना अनंत है -" उपन्यास में भी उपलब्ध होते हैं । यहाँ कुछेक को सूचीस्थ किया

गया है — सिनेमाई भाषा , लफ्फाजी तेवर , शब्दातीत सौन्दर्य , खिलण्डरे बच्चे , बलियाटिक आवारा , यत्नसाध्य स्तब्धता , वन्य पशुओं की-सी सावधानता , रोजी-रोटी की तलाश वाली खाँटी जिन्दगी , शाइस्ता इन्सान , आत्मघाती चरित्र , तैयारशुदा कपड़े आदि-आदि । [21]

मटियानीजी का "छोटे छोटे पक्षी " एक ऐसा उपन्यास है जिसमें एक प्रेमी-~~युगल~~ युग्म विवाह करने के लिए इलाहाबाद से दिल्ली आता है और फिर काफी संघर्ष के उपरान्त दिल्ली में ही सेटल्ड हो जाता है । अभिप्राय यह कि उपन्यास का विषय आधुनिक भावबोध लिए हुए है । अतः उसमें भी कई ऐसे काव्यात्मक विशेषण प्राप्त होते हैं — शातिर भाषा , टुटही और लद्धड़-सी लड़की , सिनेमाई ढंग , नामुराद शहर , तहजीबयाफ्ता लोग , आनुपातिक रूप से सधा हुआ वक्ष , मामानुमा रिश्तेदार , असंतति विभूषण , कागजी किस्म के लोग , सिनेमाई स्तर , लुकड़ही औरत , बुनियादी आदत , अंतहीन अन्यमनस्कता , फास्ट लिविंग , संदूकनुमा रसोईघर , कस्बाई लड़कियाँ , दुर्निवार प्रसंग , इन्टेलेक्चुअल लाईफ , कस्बाई और गंवई किस्म का अदीब , महानगरीय विक्षोभ , इलाहाबादी गुण्डई , अनब्रेकुबल सम्बन्ध , अविश्वसनीय अच्छाई आदि-आदि । [22]

नवीन भाषाभिव्यंजना की दृष्टि से "जलतरंग" उपन्यास भी उल्लेखनीय कहा जा सकता है । उसमें भी इस तरह के अप्रत्यासित और आकस्मिक-से विशेषण काफी मात्रा में प्राप्त होते हैं । कुछेक को यहाँ दिया गया है —— कल्पनाशील आस्वाद , अनुभवी पहचान , औरतनुमा अहसास , जोंकों की तरह चिपकने वाली नज़र , बच्चों ~~xxxxxई~~ का-सा ईगो , परिचित विलक्षणता , औरतनुमा लड़की , लिपित्वहीन अरण्य भाषा , रूपाकार-विहीन करुणा , आत्महत्या की-सी एक

लम्बी मौत , आल्कोहोलिक टेन्शन , पक्षियों की-सी अबोधता , लंच या डीनर का-सा रूटीन सेक्स , क्रिएटिव नैतिकता , गिलहरिया चांदनी , छद्म मूर्छना , अन्तविहीन बुढ़ापा आदि-आदि । [23]

"किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई " उपन्यास मोहमयी मुंबई महानगरी के जीवन पर आधारित उपन्यास है । उसमें भी कुछ इस तरह के विशेषणात्मक शब्द इफरात से पाये जाते हैं । यहां उनमें से कुछेक को उद्धृत किया गया है — फुटपाली शहनशाह , क्षत-योनि बेगमें , अनचाहा व्यभिचार , विपुलवासनावती नर्मदाबेन , डेडली सेक्सुअल, उधार टाइप की ठण्डी औरत , साधु-महात्मा बनिया भाइयों के काम की औरत , औरतनुमा आवाज़ , तांबूल -रंजित अधर , रामतीर्थ ब्राह्मी तेल की तरह इस्तेमाल होने वाली आवाज़ , पौरुषेय सौन्दर्य, गोचन टाईपिस्ट , शानदार लोन पर खेली जाने वाली टेनिस , सुलैटी वुमन, अतिव्यभिचरित शरीर , चिंतन-मनन की वेदी , चट्टानी बाहें , मोहब्बती नफ़रत , वैधव्य घुन , क्षणिक द्विविधा आदि-आदि । [24]

भटियानीजी के "हौलदार" , "एक मूठ सरसों " , "चौथी मुट्ठी " , "नागवल्लरी" प्रभृति उपन्यास ग्रामभित्तीय - परिवेश वाले उपन्यास हैं , किन्तु उनकी क्रिएटीव भाषिक -सेन्स के कारण यहां भी इस तरह के काफ़ी शब्द मिलते हैं । यथा — तुमड़िया लौकी , दुपलिया टोपी , दोछनिया स्वभाव , कबैली पठान , अढ़धिल उरोज , एकवसना देहयष्टि , गर्भवती चिन्ताएं , टोग-बचाऊ गप्पें , अठमसिया पेट , भैंसिया पंडित्याण , मोहिल मन , अढ़धिल वैधव्य , जुआरी बादल , अपजसिया भाग , किरमली बारात , गढ़ुवा छातियां , छन्दिल सौन्दर्य , चलुवा-थोल (चंचल अधर) , स्टोन- टी , तोषद सांत्वना , गैरन्टीड -ब्राह्मण बेटा , लाजढकंत्री पैजामा , तिसान -भुखान बटौ (प्यासे-भूखे बटोही) ,

अलच्छिन अक्षर , इकौरी चोंच § तिरछी चोंच§ , आनुमानिक चर्चा , चौमासिया जरो § ज्वर § , मोहिल मन , चन्द्रमुखी रात्रिबेला , क्रोधल स्वरूप , चमार चित्त , चौदिनियां-छूत , लमपुंछिया कीड़े , पांव-उखाड़ू पड़ाव , सिगरेट-सलाईनुमा मकान ;[25] फनटूटे सर्प , सपनीले सन्नाटे , बनैली बयार , ओली-डोली औरत , पत्थरिया कलंक , आश्चर्य-बोझिल विह्वलता , उपालंभभरी मुस्कुराहट , सूखी बाबिल घास जैसे छितराये केश , पनैले स्पर्श , चिमचिमी छातियां , पनीला धुंधलका , थिराई पलकें , चौमधि हरियाली , पंखहीन पोथिल , कांस-फूली उमर , लांछिता-प्रताड़िता औरतें , मोहिला छौनी , बदफेलुवा रांडी , कटीले दिन , कोखिला बैणी §सहोदरा§, फगुनौटी हवा ;[26] किसमिसी कुचाग्र , बमकूवा चूतड़ , लासानी नुस्खे , घना सत्कार , लिचड़ याचना , आंतस्तलिक वर्जना , दढ़ियल चेहरा , सौतिया पिता , घोड़िया पड़ाव , लद्दू घोड़े , विषैली विरक्ति , कपालकूटी जिन्दगी , घोड़िया सड़क , उसांसिल स्मृतियां , प्रसन्नवदना उन्मदाएं , तिलकिया घोंसले , सिन्दूररीते कपाल तले की अभागिन आंखें , गहराइयों में डूबी -अटकी तृष्णा , अधसुलगे कोयलों जैसी आंखें , चासनी में डूबती इमरतियों जैसे क्षण , घिटकुली चुड़ैल , मन्वंतर जैसे कठिन काटते कुछेक क्षण , फुलकतिया कौला बकरा बकरा , चौमसिया बुखार , धूपैली मूँछें ;[27] ठुलखौरिया लोग , वानस्पतिक सुंदरता , धाकड़ हरिजन नेता , परंपरावादी ढोली , नकचढ़ा किस्म का आदमी , विनया आदमी की-सी स्निग्धता , पक्षियों जैसी उड़ान भरती महत्वाकांक्षा , शांतिनिकेतनी झोला , लमधोतिया पुरोहित , गड्ढे में पड़ी हथिनी-सी विचलितता , अधमरी-सी रोशनी , दर्पिता औरत , सतघरिया औरतें , आसन्न मातृत्व , ट्रांजिस्टर संस्कृति , नुक्ताचीनी लोग , घुमन्तू नौसिखिए , हरिजन-कुल-काक-भुशुण्डि , डूम द्रोणाचार्य , बर्फीली बर्छी , पहाड़द्रोही धंधा ;[28]

इसके अलावा "गोपुली गफूरन" , "रामकली" आदि उपन्यास में अहि कुछेक ऐसे विशेषण प्राप्त होते हैं । यथा — औरतखोर

आदमी , कटखना कुत्ता , नंगी-सी आँखें , घुटनिया धोती , बत-रसिया पंडित , औघड़ शब्द , अस्तित्वग्रासी पश्चाताप ;[29] दर्पिल स्वभाव , घुड़हा आदत , अबूझ निरूपायता ;[30] आदि - आदि ।

मटियानीजी के उपन्यासों में प्रयुक्त नये रूपक :

यह कई बार देखा गया है कि मटियानीजी की उपन्यास-भाषा काव्यभाषा का रूप ले लेती है । उनकी इस विशेषता के कारण उनके उपन्यासों में हमें कई नये रूपक उपलब्ध होते हैं । यहाँ कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं :

बकवास का अरण्य , अनाश्रय का अँधेरा , घरेलू औरत की व्यावहारिकता , भीतर का कंगलापन , स्मरण-शक्ति की रील , तंगदस्ती की दबोच , परिस्थितियों की दबिश , बरों का छत्ता (ट्रकों , बसों , स्कूटर , कार , साइकलों से भरा शहर) ;[31] आभिजात्य का नशा , उतरते हुए नशे की ताजगी , सड़क पर का भँवर , रोमान्स का सन्नाटा , अफसरी का आभिजात्य , कस्बा का करिश्मा , भैंस जैसी उतावली , फालतू वक्त के मालिक , पतिवंचना का अंधा कुआँ , चतुर्थावस्था की पुरुष-स्फूर्ति ;[32] कामुकता की चंचलधार , कर्म के कमण्डल , ध्यान के चिमटे , पेट-वज्र पर्वत , पर्वतिया गात , सौतिया दर्प , बतख सी कंठिला , दृष्टि-परिधि , कटीले-बनीले सैन*बैनों की सीखचें , प्रतिष्ठा-नौका , तिरिया-चरित्र का मकड़जाला , चंचल चरित्र का चिमटा , वृद्धावस्था का पहरा ;[33] ट्रावेलोग के टॉनिक्स , परलोक का मायावीपन , लेनिन-मार्क्स का झुटकेला (नाजायज संतान के लिए) ;[34] आँचल की चट्टान , लाज-शरम के बादल , अँधेरे बादलों का पानी , वात्त-पित्त की चिमटियों में फँसी देह , भावना की तिक्तता , संस्कारों की सरहद ;[35] वासना का विषधर , निश्चय के पाँव , प्रश्न की

सर्प-कुंडली ;[36] समय का नवाब , नैतिकता की दीवार , स्मृतियों की हरी-हरी दूब , सौन्दर्य और सौष्ठव का शतदल (योनि के लिए) , अतृप्ति के रन्ध्र , किस्से का नाड़ा , अनुभवों की घृताहुति , आदेश का गंतव्य , वैधव्य का सांप ;[37] मन-पंथ के विचार-राही , अल्हड़ता का धूल-सना इतिहास , अमन-चैन के राज-प्रासाद , विशाल वक्ष का आधार , निर्मल-सुंदर-निर्झर की योनि , मन-तुरंग , कांटों की झाड़ी में कनेर की कली , मन-कपोतिनी , मन का मृग-छौना , अवसाद की कैंची , विश्वास-भावना की रेत , आंखों का सिग्नल , कामना-कल्पना की गैस ;[38] शोक-संताप के ~~xxx~~ कीड़े , कलेजे का काठ , रेखाओं का रीतापन , आत्मा का खोखलापन , ममता की मिसरी , जिन्दगी का पहाड़ , पुरुष-पंछी , तरुणाई की तपन , दुःख की ताम्र-कलशी , घर-गृहस्थी के घुटने , आत्मा की अरुणाई ~~xx~~ ;[39] अविवाहित-ताजगी , फिलहाल के गुच्छे , सुंदरता की जोखिम , वाक्पटुता रूपी कांइयापन , स्तनों का मैग्नेट नग्न-निर्दोषिता , यादों की ~~xxx~~ चुइंगम , दर्पण की पारदर्शिता , अहसास का असबाब , अतीतजीविता का रोग , ~~xxx~~ प्रतीक्षा का रोमानीपन , चेहरे का कोहरापन ;[40] भाषा की आंख , अंतराल की कठिनता , आकाश की समृद्धता , बेहयापन की कला , नंगेपन की नियामत , दहशत का सर्प , कुटिलता-कला , विषाद के पहाड़ , ढुलमुलता का पानी , संभोग-साधना , अकूत अरण्यता का वहशीपन, यादों का अंधेरापन , संभावनाओं की खाई , हविशों का आगार ~~xxx~~ आदि-आदि ।[41]

मटियानीजी के उपन्यासों में नयी-भाषाभिव्यंजना के अन्य रूप :

ऊपर जो भाषा-शिल्प के विविध आयामों को विवेचित किया है , इसके अतिरिक्त भी कई ऐसे पक्ष हैं जो अनाकलित रह जाते हैं , किन्तु विस्तार-भय के कारण बहुत संक्षेप में उन पर यहां विचार किया जा रहा है । मुहावरों का प्रयोग तो लगभग प्रत्येक कथाकार करता है , किन्तु उसमें वैशिष्ट्य तब आता है जब कोई लेखक मुहावरों का प्रयोग

नये ढंग से करता है । बातों में से हारे हुए पहलवान के पसीने की बू आना , हगने वाले को नहीं देखने वाले को शरम , झिल में तिनका पड़ने जैसी हलचल को पैदा करना , अपनी ही हग्गो-मुत्तों के आगे की जिन्दगी जीना , व्यक्तिगत दुःखों का ** रांड-रोना रोते रहना , नींद का तिनका टूटना , अपने रंडुवेपन को डिस्ट्रीब्युट करना , किसिंग-चिसिंग तक का प्यार , औरतों का "सी-कोम्पलेक्स" में होना , एक फूल जुड़े में लगाकर सौ जगह खुशबू बिखेरना , समय के नवाबों का दिनों के कबूतर उड़ाना , अतृप्ति के रन्ध्रों पर सही-सही अंगुली फेरना , किस्से के नाड़े को खिसकाना , दूध-भात खाने के दिन , आड़ू-बेड़ू-धिंगारू जैसी कमीन-कुजात संतान को पैदा करना , किसी के नाम को अपने कंठ से मोती-हार की तरह लगाए रखना , कस्तूरी के बीड़े को कुपात्र के हाथ सौंपना , किसी को देखते ही चूल चसमसाने लगना , दाहिने बैठना , न इस धार का रहने दिया न उस धार का , थूक के आंसू लगाना , भैल से निकली पाद हो गई , जलेबी की खाली पुड़िया जैसी बातें , खुद काम करने में सात जगह से चौड़ी होना , दूसरों के कामों में छिलके-कंकर निकालना , छाती में बाल होना (हिंमत होना) , हवा ढीली करने में लगे रहना (किसी को परेशान करने में लगे रहना) , राजा इन्दर का दरबार मिल जाना , कानों में मिसरी के कुंजे फोड़ना (प्रिय बात सुनाना) , पाथरों के बीच का हीरा , मैराथोन रेस का धावक होना , कमरे का साम्यवादी होना , सूरत ऐसी बनाना कि सारी दुनिया की चिंता अपने चूतड़ों पर चढ़ी लगे , दू-बर-दू बातें करना , चल मेरे घोड़े टिक टिक टिक वाली जिन्दगी , आसमान का तू-तू करना , लैला की गली से भागना , चेहरे का शीशे से ज्यादा गया-बीता हो जाना , हातिमताइयों की सवारी मिल जाना , चूतिया-पचीसी करना , अपने हाथों को आपस में गूंथकर चलना , जाटों के यहां खाट खड़ी करने के अलावा कोई दूसरा मुहावरा नहीं होता , बातों के सींग-पूंछ का पता रहना , बारह पत्थर बाहर होना (सगों

की गिनती में न होना ॥ , आकाश देखनी पाताल हेरनी हो जाना , अपनी ही टांग संभालने की फुर्सत न होना , कहीं जा-मरूं कहीं जा-मरूं होने लगना , पतले तवे की तरह ततिया उठना आदि-आदि ।[42]

मुहावरों की भांति कहावतों के नये प्रयोग भी मटियानीजी के उपन्यासों में बहुतायत से मिलते हैं । यथा —— कसाई की आंख भेड़ की ऊन पर नहीं उसके गोश्त पर रहती है , सांप अपनी मणि को भूल सकता है, लेकिन मनुष्य प्रेम को नहीं , ढुलमुलता तेरा नाम ही औरत है , धूप में किए हुए प्रेम का रंग काला पड़ जाता है ;[43] जंगल काटे जडकट्टे , चोरों के चट्टे-बट्टे , नाड़ा ढीला कभी नहीं बांधना चाहिए , बुद्धिमान लोग चूहे के काटे को प्लेग बन जाने से रोक देते हैं , बिना बोझ के तो जानवर भी कायदे से नहीं चलता , आंसू हमेशा आंखों से ही फूटते हैं घुटनों से नहीं , अकबर की दाढ़ी अकरम नोंचे , समुद्र के किनारे रहूंगी अलग-अलग बहूंगी , पूस की पालक माघ की बालक , चूहे की ट्रेजड़ी बिल्ली का बिल्ली होना नहीं खुद का चूहा होना है , बीबी मरे तो हलवा मियां मरे तो हलवा , नाव डूबे तो डूबे हमारी पोटली ना डूबे ;[44] स्त्री के मामले में आदमी को कोलंबस की तरह खोजी होना चाहिए , ईश्वर का भय ही बुद्धि का प्रारंभ है , मकड़ा भी चक्कर काटता है तो जाला बुनता चलता है , जो लोग ओब्लाइज़ु करना नहीं जानते उनका थैंक्यू बैंगन से भी ज्यादा बेकार होता है , समय बीतने पर पहाड़ भी बैठ जाता है , चूहा अपनी जिंदगी में जितना नहीं खाता उतना हाथी सिर्फ एक बार में खा लेता है , साझे के बाथरूम से तो साझे की बीबी अच्छी , घड़े घड़े की मिट्टी अलग होती है , पक्षी भी अण्डा देने से पहले घोंसला तैयार कर लेते हैं , झाड़ियां हैं तो खरगोश भी जरूर होगा ;[45] दाइयों से पेट छिपता तो मुहावरा क्यों बनता , कपाल पर ही नहीं चूतड़ों पर भी चंदन लगाना चाहिए , औरतों को लगाने का कपड़ा पेण्ट पर लगाने से क्रान्ति थोड़े ही आती है , सर्दियों में भैंसें सिर्फ मूतने के मतलब की

रह जाती है , मालिक बकरा खाने बैठा है तो कुत्ता हड्डी की उम्मीद करता ही है , बुजुर्गों का कहना आंवले का दाना होता है , मुसलमानों के घरों में तो साले चूहे भी शायद होते हैं , जैसी मुर्गी वैसा अण्डा ; 46 जिस बकरी को जल्दी कटना होता है वह कसाई को देखकर ज्यादा "मैं" मैं" करती है , देश जाने से बेटा और खेत जाने से बैल सुधरता है , सांपों के बीच सपेरा बनकर ही जिया जा सकता है , जिस कुतिया में भूंकने-काटने का सामर्थ्य नहीं होता है उसके अपने पिल्लों का पहरा कहां होता है ? , बिना दरांती हाथ में लिए तो खेतों में खड़ी फसल भी नहीं कटती , विपद के समय अपनों के ही अंग पसीजते हैं , नामी रोवे नाम को गांडू रोवे पेट को , कलेजे के कान बड़े कोमल होते हैं , गाय अपने लिए चरती है बाछी अपने लिए , हाथी की सलाह शेरों की समझ में भले ही आ जाए स्यारों को तो पाद मारके उड़ा देना है , सवार सफर के लिए तैयार खड़ा है पर घोड़ी को घास खाने से फुरसद नहीं है , निगरगण्ड मोटा नफा न टोटा , दुल्हन सामने है तो घूंघट उठाने में क्या समय लगता है , पापी परमेश्वरा हाथ न दिया तो हलवा काहे को दिया , शक्तेश्वर की सड़क मुक्तेश्वर मुक्तेश्वर की सड़क बागेश्वर ; 47 बूढ़ों को खांसी ले जाती है औरतों को हांसी , बामन जाति का आदमी या तो शिकार खाएगा नहीं और खाएगा तो गिद्ध बन जायेगा , गू खा बैठी हूं तो बास कहां छिपाऊंगी ; 48 भिक्षा की चुटकी कितनी दान की मुट्ठी कितनी , फल क्या पके डाली तोड़ गए , रहस्य की बातें बयार के संग उड़ती हैं , कूदने से पहले सरोवर गहरा दिखाई पड़ता है और चढ़ने से पहले पहाड़ ऊंचा , वारुणी की बान से ढला हुआ शीतल जल से संतुष्ट नहीं हो सकता , तिरिया के वचन और चोरों की शपथ का भरोसा नहीं करना चाहिए , मुंह सामने की तिरिया से संगति और पीठ पीछे के दुश्मन से बैर करने में उतावली नहीं करनी चाहिए ; 49 न पाने वाले ने पाया दिखा दिखा के खाया, बीज बोया था फसल खड़ी महतारी से बेटी बड़ी , बिच्छू के काटे का

दाह कम होते ही सांप ने काट लिया , दूसरे के सिर घिसघिसी लगाने से अपने सिर की लटी चुपड़ी नहीं होती , अपने छौने को प्यार देते समय बाघिन अपने हाथों के तीखे नाखुन बाहर नहीं निकालती ;[50] बनिये के लिए अपमान का मूल्य ही क्या , सांप से बचा रस्सी से भी डरता है , आकाश में बादल घिरते देख घर का पानी भरा घड़ा फोड़ देना , मायके का तो कुत्ता भी प्यारा लगता है , राहु न देवें थाहू केतु न पड़ने दे चेतू , भैंसें हरी घास देखते ही दौड़ पड़ती हैं , जिन्दगी है मौज में भर्ती हो जा फौज में ;[51] खाते राक्षस से लगता भूत अच्छा , रस्ता बतावे पंडिता तो जात्रा न होवे खंडिता , बाछी देने वाली गौ और बेटा देने वाली औरत बड़े भाग्य से मिलती है , बासमती का चावल खानेवाले हाथ और होते हैं , चोरों से मोर मरते तो भावर ही रीता रह जाता , बानर को सूरत देखने का शौक लगा तो दूसरों का तो आईना तोड़ा और अपने शरीर में कांच चुभाए , बिल्ली के बच्चे को तो जनम से ही ~~मरखुत्र×हरे×होते×हैं×अर~~[52] नाखुन होते हैं आदि-आदि ।[52]

यहां एक बात ध्यातव्य है कि उपर्युक्त कहावतें कुमाऊं प्रदेश में तो प्रचलित हैं , अतः उनके लिए वे नयी ~~××~~ नहीं हैं , किन्तु अन्य हिन्दी भाषियों के लिए वे नयी हो सकती हैं । दूसरी एक बात जो यहां बताना चाह रहे हैं वह यह है कि कुमाऊं प्रदेश में व्यक्तिवाची नामों से कहावतों को बनाने की एक प्रवृत्ति दृष्टिगोचर होती है । ऐसी कहावतों को हमने यहां अलग छांटकर रखा है । यथा --

गंगासिंह गया तो सही मगर हरकसिंह के हिस्से का हलवा छोड़कर , न आगे आनसिंग न पीछे पानसिंग टीकमसिंग की नज़र अपनी ~~हि~~ ही टांग पर , गुनहगार गंगासिंह मगर सजावार शेरसिंह , मघनसिंग चाहे अपनी मौत मरा हो पर हरकसिंग के हाथों में तो हथकड़ी पड़ ही गई , बचेसिंग के बालगोपालों को बचेसिंग की बेहोशी ही खा गई ,

हां कहूं तो हरसिंह के हाथ कटते हैं और ना कहूं तो नरसिंह की नारी जाती है , डूंगरसिंह की बात पर्वतसिंह जाने , करमसिंग जाता है कपकोट को तो अमरसिंग जाता है अस्कोट को , जिस शेरसींग के लिए सड़क तैयार करनी थी वह तो पदमसींग के साथ पगडंडी के रास्ते से खिसक गया , टीकमसींग ने ट्रेनिंग तो ली पर जल्दी ही फौत हो गया , मोहनसिंग की मोहिनी सोहनसींग के साथ चली गई , भिमुली का भीमसींग तो खिमुली का खडकसींग , मूलसींग मान तो गया पर दिया कुछ भी नहीं , पंडित पदमकुमार को मुल्ला ~~xxxxxxxx~~ मोइनुददीन ही जान सकता है , खुमानसिंग की खटपटें गुमानसिंग की घरवाली जाने आदि-आदि ।

संक्षेप में कहा जा सकता है कि मटियानीजी के उपन्यासों का भाषा-शिल्प वैविध्यसभर , संपन्न और समृद्ध है । उन्होंने हिन्दी भाषा को कई नये शब्द , कई नये क्रिया-रूप ~~xxxxxx~~ , कई नये उपमान , कई नये रूपक , नयी सूक्तियां , नयी कहावतें और मुहावरे दिए हैं । मानवीय संवेदना और दर्द और करुणा के साथ-साथ नवीन भाषाभिव्यंजना देकर उन्होंने हिन्दी साहित्य में निश्चय ही अपना मकाम कायम किया है ।

(ब) मटियानीजी के उपन्यासों में प्रयुक्त विभिन्न भाषा-शैलियां :

जैसा कि पूर्ववर्ती पृष्ठों में स्पष्ट किया गया है कि प्रस्तुत अध्याय में जहां एक तरफ हम मटियानी के नवीन भाषा-शिल्प की भलीभांति पड़ताल करेंगे , वहां दूसरी तरफ उनके उपन्यासों में हमें जो शैलीगत वैविध्य प्राप्त होता है उसकी भी सोदाहरण चर्चा प्रस्तुत करेंगे । जिस ~~xxx~~ तरह उनकी सोच और चिंतन का व्याप काफी विस्तृत और गहरा है , ठीक उसी तरह उनके उपन्यासों में हमें विभिन्न प्रकार की भाषा-शैलियों के दर्शन होते हैं ।

"शैली" शब्द "शील" से व्युत्पन्न हुआ है । "शील" का अर्थ है — स्वभाव । व्यक्ति कोई भी कार्य अपने स्वभाव , गुणधर्म या संस्कारों से वशीभूत होकर करता है । इस प्रकार किसी काम को करने की विशिष्ट पद्धति को शैली कहते हैं । अंग्रेजी का " Style " शब्द लैटिन भाषा के " Stylus " शब्द से व्युत्पन्न हुआ है । वस्तुतः " स्टाइल" लोहे की एक कलम होती थी जिससे मोम की पट्टियों पर शब्द अंकित किए जाते थे । अतः बाद में लक्षणा द्वारा इसी "स्टाइल" का अर्थ लिखने की प्रणाली या ढंग हो गया जिसे हम "शैली" कहते हैं । शैली का अर्थघटन दो-तीन प्रकार से होता है — एक तो वह है जिसमें कहा गया है कि " Style is a man " "शैली ही मनुष्य है । " इस अर्थ में शैली अभिव्यक्ति का एक वैयक्तिक प्रकार हुआ । प्रत्येक अच्छे लेखक या कवि का अपना एक विशिष्ट ढंग होता है । लेखक या कवि के इस ढंग को ही "शैली" कहते हैं । कई बार देखा गया है कि ~~x~~ कुछ पंक्तियों को सुनते या पढ़ते ही हम अनुमान लगा लेते हैं कि ये पंक्तियाँ प्रसाद , पन्त , निराला , महादेवी या बच्चन की होंगी ; तो उसके पीछे भी यही कारण है । प्रेमचन्द , जैनेन्द्र , अज्ञेय , रेणु , मटियानी आदि लेखकों के भी कुछेक परिच्छेदों को पढ़कर ही हम बता सकते हैं कि यह प्रेमचन्द है , कि जैनेन्द्र , कि रेणु , कि मटियानी ? तो इसमें भी यही कारण है । दूसरे अर्थ में "शैली" अभिव्यक्त के सामान्य या शास्त्रीय भेद हैं जो वैदर्भी , गौड़ी , पांचाली आदि काव्य-रीतियों पर आधारित है । तीसरे अर्थ में कई बार हम रचना की श्रेष्ठता या निकृष्टता के संदर्भ में "शैली" शब्द का प्रयोग करते हैं । यथा — सुंदर या श्रेष्ठ रचना के संदर्भ में हम कहते हैं — " वाह ! इसे कहते हैं शैली ! " उसके विपरीत किसी की भर्त्सना करते हुए कहा जायेगा — " यह क्या शैली है ? " इस प्रकार अच्छे लेखक या कवि को अच्छा शैलीकार कहा जाता है ।[53] इसी अर्थ में मटियानीजी को उनके समीक्षक एक श्रेष्ठ शैलीकार कहते हैं ।

सुप्रसिद्ध यूनानी चिंतक अफलातून या प्लेटो के मतानुसार जब विचार को तात्त्विक रूप आकार प्रदान किया जाता है तब "शैली" का उदय होता है । प्रसिद्ध फ्रांसीसी उपन्यासकार स्तान्धाल ने शैली को अच्छी रचना का गुण मानते हुए कहा है कि शैली का अस्तित्व इसमें निहित है कि दिए हुए विचार के साथ उन सब परिस्थितियों को जोड़ दिया जाए , जो कि उस विचार के अभिप्रेत प्रभाव को सम्पूर्णता में उत्पन्न करने वाली हैं । इसी बात को बर्नार्ड शा बहुत संक्षेप में अपनी सूत्रात्मक शैली में कहते हैं कि प्रभावपूर्ण अभिव्यक्ति ही शैली का अथ और इति है ।[54]

इस संबंध में सुप्रसिद्ध आंग्ल विवेचक मिडिल्टन मरे अपने सुप्रसिद्ध ग्रन्थ " द प्रोब्लेम आफ स्टायल " में लिखते हैं —" इट § हाईएस्ट स्टाइल § इज़ ए कोम्बिनेशन आफ द मैक्सिमम आफ परसनालीटी विथ मैक्सिमम आफ इमपरसनालिटी , ऑन द वन हैण्ड इट इज़ ए कोनसन्ट्रेशन आफ पिक्युलियर एण्ड परसनल इमोशन , आन द अधर हैण्ड इट इज़ ए कम्पलिट प्रोजेक्शन आफ धिस परसनल इमोशन इण्टू द क्रिएटेड थिंग ."[55] अर्थात् अच्छी शैली में कलाकार के व्यक्तित्व और निर्वैयक्तित्व का वांछनीय सम्मिश्रण मिलता है । लेखक चाहे जितना भी प्रयत्न करें अपनी शैली से अपने व्यक्तित्व को वह अलग नहीं कर सकता , तथापि उसे यह ध्यान रखना चाहिए कि उसमें विषय को भी एक अलग व्यक्तित्व मिले कि वह स्वयं बोलने लगे । इस तरह एक अच्छे शैलीकार को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि शैली में न तो इतना निजीपन हो कि वह सनक या फक्तीपन की सीमा को लांघ जाए और न तो इतनी सामान्यता कि रचना नितांत निष्प्राण प्रतीत हो । यहां हम बहुत संक्षेप में शैलेश मटियानी के उपन्यासों की शैलियों पर विचार करने जा रहे हैं । उनमें शैलियों का इतना वैविध्य है , और कहीं-कहीं इतना वैपरित्य भी कि उसकी वैज्ञानिक छान-बिन के लिए हमें उन्हें निम्नलिखित श्रेणियों वा कोटियों में विभक्त करना पड़ेगा —

[क] सैद्धान्तिक दृष्टि से शैली के प्रकार
[ख] उपन्यास के रूपबंध के आधार पर शैली के प्रकार
[ग] परिवेश के आधार पर भाषा-शैली के प्रकार
[घ] अन्य आधारों की दृष्टि से शैली के प्रकार ।

[क] सैद्धान्तिक दृष्टि से शैली के प्रकार :

मटियानीजी के उपन्यासों में सैद्धान्तिक दृष्टि से शैली के निम्नलिखित भेद उपलब्ध होते हैं — 1. मधुर शैली , 2. सरस शैली , 3. विदग्ध शैली , 4. व्यास शैली , 5. समास शैली , ~~[xxxxxx]~~ 6. प्रौढ़ि शैली , 7. धारा शैली , 8. तरंग शैली आदि-आदि । अब बहुत संक्षेप में उन पर सोदाहरण बात करेंगे ।

1. <u>मधुर शैली</u> : जो शैली माधुर्य-गुण संपन्न होती है । जिसमें मधुर-कोमल शब्दों का प्रयोग हो उसे "मधुर शैली" कहा जायेगा । मटियानीजी अपने उपन्यासों में आवश्यकतानुसार अर्थात् विषय को ध्यान में रखकर , पात्रों की प्रकृति के हिसाब से उसका प्रयोग करते हैं । "छोटे छोटे पक्षी " , - "जलतरंग" , "मान सरोवर " , "रामकली" आदि उपन्यासों में हमें कई स्थानों पर मधुर शैली के दर्शन होते हैं । इसका अर्थ यह कतई नहीं कि अन्य उपन्यासों में इस शैली का प्रयोग नहीं मिलता है । एक और बात भी इस संदर्भ में कहना आवश्यक है कि न केवल मधुर-कोमल शब्द , प्रत्युत मधुर-कोमल भाव भी इस शैली में अभिव्यक्ति पाते हैं । एक उदाहरण द्रष्टव्य है —" पुरुष होने की कला क्या सबमें होती है ? एक बात मैं तुमसे कहना चाहती हूं कि प्रेम का संसार प्रत्येक आदमी के भीतर उदित होता है ; लेकिन कुछ होते हैं , जो उसे जीवन-भर के लिए धारण करते हैं , और ज्यादातर लोग उसे हाथ में पकड़ी मशाल की शक्ल में देखते हैं । स्त्री और पुरुष का साथ कितना बड़ा हो सकता है

और कैसे उनके अकेले चलते रहने पर भी उनका प्रेम चन्द्रमा की तरह साथ-साथ चलता रहता है, जीवन के अन्त तक -- मैं देख चुकी हूं। और यह देखा हुआ ही है, जो मुझे किसी शापग्रस्त अप्सरा की तरह भटका रहा है।" 56

2. सरस शैली : सरल शैली में सीधे-सादे सरल वाक्य, छोटे-छोटे वाक्य, समासरहित वाक्य, किन्तु साथ-ही-साथ रसयुक्तता पायी जाती है। यह शैली भी मटियानीजी के प्रायः प्रत्येक उपन्यास में पायी जाती है। यहाँ मटियानीजी के उपन्यास "आकाश कितना अनंत है" से एक परिच्छेद उदाहरण-स्वरूप प्रस्तुत करते हैं -- " यह आदमी तो हीरा है, साहब ! ये सियासी लोग बड़े हरामी किस्म की चीज़ होते हैं, एक ऐसे आदमी पर एंटीनेशनल और चीनी तरफदार होने का इल्जाम लगवा दिया, जिस पर हमें नाज़ करना चाहिये। मैं तो अक्सर उनके पास जा पहुंचता हूं। क्या बातें करते हैं वो। क्या जेहन पाया है। और इस मुल्क के गरीबों के लिए कैसा मुहब्बत-भरा दिल ! आते ही होंगे, आप लोग पूछ सकते हैं, अपने तई हमने हर चंद यह कोशिश की है कि उनको किसी तरह की कोई तकलीफ न महसूस हो। हम लोग सरकारी नौकर हैं, साहब, इससे ज्यादा हम क्या कर सकते हैं।" 57

3. विदग्ध शैली : मधुर शैली और सरस शैली अभिधात्मक भी हो सकती हैं, परन्तु विदग्ध-शैली लक्षणा-व्यंजना मूलक होती है। यहाँ कोई भी बात सीधे न कहकर "व्यंग्य" होती है। जब जटायु राम से पूछते हैं कि मैं स्वर्ग जा रहा हूं, तो वहाँ महाराज दशरथ को क्या यह वृत्तान्त कहूं ? उसके उत्तर में राम कहते हैं कि नहीं, यह वृत्तान्त तो स्वयं रावण कुलसमेत जाकर उनको सुनायेगा। तो इसका व्यंजना से अर्थ यह होगा कि राम सीताहरण के कारण समूचे रावण-वंश का नाश करेंxxx करेंगे और इसलिए स्वयं रावण अपने कुलसमेत

स्वर्गलोक में जाकर महाराज दशरथ को वह बात सुनायेगा । इसका एक दूसरा मनोरंजक उदाहरण यह है कि एक भाई दूसरे को कहते हैं कि तुम गधे हो , तो उसके जवाब में वह पहला व्यक्ति कहता है कि मैं तो आईना हूं । "मैं तो आईना हूं " की व्यंजना यह होगी कि गधा मैं नहीं बल्कि तुम हो । इसे कहते हैं विदग्ध रीति । संक्षेप में किसी गद्य-विधा में विदग्ध - शैली का निर्माण तब होगा जब उसमें किसी बात को सीधे-सपाट ढंग से न कहकर लक्षणा-व्यंजना के द्वारा कहा जाए ।इसके उदाहरण के लिए हम यहां "आकाश कितना अनंत है " से कुछेक परिच्छेद ले रहे हैं -- " मैं बखूबी जानता हूं कि मेरे लिखने से या अखबार निकालने से इस पूंजीवादी निज़ाम के लिए पहाड़ पर मक्खी के जा बैठने जितना भी असर नहीं पड़ना है , मगर इस बारे में मुझे बाबा तुलसीदास की बानी दिलासा देती है कि मच्छर भी उड़ता जरूर है ... शायद वो भी महसूस करते थे कि मुगलिया सल्तनत पर रामायण फेंकना सामान्य तौर पर सिर्फ एक मज़ाक बनना है । ... जहां तक मेरा सवाल है , शेखर मैंने तय कर लिया है कि अपने को हिन्दुस्तान के समाज का साठ करोड़वां टुकड़ा-भर मानकर चलता हूं .... और अखबार निकालते हुए भी यह जोश नहीं रखना है कि इस पूंजीवादी निजाम के खिलाफ इन्कलाब कितना हुआ , बल्कि नज़र बस सिर्फ इस बात पर रखनी है कि इस "प्रोसेस" में मेरी खुद की समझ में कोई बेहतरी आयी है या नहीं ?" [58] इसी उपन्यास में शेखर के एक प्रश्न के संदर्भ में मानवीय-संघर्ष के महत्त्व को लेकर कामरेड सूरज का एक कथन आया है , जिसे भी हम इस शैली का एक उदाहरण कह सकते हैं -" ये ठीक है कि आसमान का कोई अन्त नहीं , वह सचमुच अनंत है । मगर , प्यारे , आदमी का अपनी इन्सानियत को अपने हाथों और अपनी आंखों के सामने जी सकने का संघर्ष भी इससे कम अनंत हर्गिज नहीं है । संसार की सारी नियामतों से मूल्यवान और खूबसूरत यह संघर्ष न हमसे-तुमसे शुरू हुआ है और न हमारे-तुम्हारे

साथ खत्म होगा ।"[59] तो इसी उपन्यास की मिसेज मैठाणी जिन्दगी की अर्थवत्ता के बारे में कहती है —" राजशेखर , जिनको सच्चाई का असली रूप समझ में आ जाता है , वो जिन्दा रहने के लिए सामान्य लोगों से कहीं ज्यादा बड़ा संघर्ष करते हैं । जीवित रहने के लिए उनमें "पेशन" के दर्जे का मोह हो जाता है । वो अपनी सच्चाई को अपनी आँखों के सामने आकार लेते हुए देखना चाहते हैं । मरने-मारने की तैयारी में तू काफी वक्त लगा चुका , राजशेखर राजशेखर । अब जिन्दा रहने के लिए वक्त निकालने की बात सोच । ... नहीं तो तुझे कभी एकाएक यह पता चलेगा कि तू सिर्फ जिन्दा रह गया है और जिन्दा रहने का अर्थ तेरे हाथों से कहीं छूट गया है ।" [60]

(4) 4. व्यास शैली : व्यास-शैली में किसी बात को बहला-बहला कर अनेक प्रसंगों और उदाहरणों द्वारा स्थापित करने का प्रयत्न रहता है । "व्यास" शब्द का अर्थ ही विस्तार या फैलाव होता है । व्यास शैली का एक उदाहरण हम यहाँ आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की "चिंतामणि" के एक निबंध " लोभ और प्रीति " से इसे स्पष्ट करने निमित्त दे रहे हैं —" यदि किसीको अपने देश से प्रेम है तो उसे अपने देश के मनुष्य , पशु , पक्षी , लता , गुल्म , पेड़ , पत्ते , वन , पर्वत , नदी , निर्झर सबसे प्रेम होगा । सबको वह चाहभरी दृष्टि से देखेगा , सबकी सुध करके वह विदेश में आँसू बहायेगा । जो यह भी नहीं जानते कि कोयल किस चिड़िया का नाम है , जो यह भी नहीं सुनते कि चातक कहाँ चिल्लाता है , जो आँख-भर यह भी नहीं देखते आम प्रणयसौरभपूर्ण मंजरियों से कैसे लदे हुए हैं , जो यह भी नहीं झांकते कि किसानों के झोंपड़ों के भीतर क्या हो रहा है , वे यदि दस बने-ठने मित्रों के बीच प्रत्येक भारतवासी की औसत आमदनी का परता बताकर देश-प्रेम का दावा करें तो उनसे पूछना चाहिए कि भाइयो ! गिना

परिचय का यह प्रेम कैसा ? जिनके सुख-दुःख के तुम कभी साथी न हुए उन्हें तुम सुखी देखना चाहते हो , यह समझते नहीं बनता । उनसे कोसों दूर बैठे-बैठे , पड़े-पड़े या खड़े-खड़े , तुम विलायती बोली में अर्थशास्त्र की दुहाई दिया करो , पर प्रेम का नाम उसके साथ न घसीटो । प्रेम हिसाब-किताब की बात नहीं है । हिसाब-किताब करने वाले भाड़े पर भी मिल सकते हैं पर प्रेम करने वाले नहीं । हिसाब-किताब से देश की दशा का ज्ञान मात्र हो सकता है । हित-चिंतन और हित-साधन की इस ज्ञान से भिन्न है । वह मन के वेग पर निर्भर है । उसका सम्बन्ध लोभ या प्रेम से है जिसके बिना आवश्यक त्याग का उत्साह हो ही नहीं सकता ।"[61]

कहने का तात्पर्य यह कि "व्यास"शैली" में सूत्र-रूप में कही हुई किसी बात को अनेक उदाहरणों के माध्यम से प्रमाणित करने का यत्न होता है । अब यहां "व्यास-शैली " का एक उदाहरण मटियानीजी के उपन्यास " बोरीवली से बोरीबन्दर तक " से प्रस्तुत है — " वीरेन सोचता रहा । ... इन राहों पर कितने प्रकार के राही चलते हैं , इस मन के पंथ पर कितने विचार-राही आते-जाते रहते हैं , ठीक ऐसे ही , इसी क्रम से , आने-जाने का , कुछ सोचने-परखने का सामान जुटाए हुए । जैसे यह देखना , सोचना , परखना ही जीवन का पाथेय हो । ... फिर यह देखना-सोचना भी कितना विचित्र , नाप-जोख से परे । कभी कौतूहल , तो कभी समाधान , कभी चिन्ता तो कभी मन का सारा बोझ हल्का कर दे — ऐसी अल्हड़ता । ... और ये बच्चे कितनी उन्मुक्त सांसें हवा में छोड़ते हैं , कितनी अदम्य उमंग से जाने-न-जाने खेल खेलते हैं , कि मुट्ठी में छटांक भर धूल नहीं , बड़े-बड़े महलों से भी सुन्दर घरौंदे बन रहे हैं । मुट्ठी-चार मुट्ठी के इन मिट्टी केराज-प्रासादों में कितना अमन-चैन है । ... कभी वीरेन ने भी तो अमन-चैन के ये राज-प्रासाद बनाए होंगे । बनाए थे , कुमौली के उस पंडित के साथ ,

जो सवाई माधोपुर में बिछुड़ गया ; सरू के साथ , बसंत पंचमी को जिसके लिए साटन का पिछौड़ा लाया , तो दो बूंद आंसुओं से भिगोकर पानतोली के तालाब में पत्थर बांधकर डूबो दिया ; गौरी भैंस के साथ , जिसे कंटीली झाड़ियों से घास निकाल-निकाल कर खिलाया , पर दूध देने के दिन आए , तो धनधार के भ्यौल {चट्टान} से गिरकर दम तोड़ गई ; बुरूंशी फूलों के साथ , जो जेठ आते ही कुम्हला गए ; लाली-काली बकरियों के साथ , जिन्हें बूचड़ खरीद ले गया ; और अबोले भाई , अब अनब्याही बहिन के साथ , जो लाड़-प्यार के दिनों में ही इतनी दूर चले गए , कि जैसे यहीं आकर ये सारे घरौंदे — मुट्ठी-चार-मुट्ठी के राजप्रासाद उजड़ गए हैं , वीरान हो गए हैं , कि जैसे जीवन की सारी उमंगें लुट गई हैं , कि जैसे — कुछ ऐसा कि जैसे कुछ भी नहीं रह गया है ....." 62

5. <u>समास-शैली</u> : "समास-शैली" व्यास-शैली का विलोम है । उसमें अनेक भावों , व्यापारों व क्रियाओं को सामासिक और सुगठ्ढ {Compect} रूप दिया जाता है । उसमें बात को सूत्र-रूप में रखने की , या गागर में सागर भरने की प्रवृत्ति मिलती है । आचार्य रामचन्द्र शुक्ल अपने निबंध " श्रद्धा-भक्ति " में पाप , पापी और उसके फल की विवेचना करते हुए सूत्र-रूप में कहते हैं — " यदि पापी अपने पाप का फल एकांत में या आत्मा में ही , भोगकर चला जाता है तो वह अपने जीवन की सामाजिक उपयोगिता की एकमात्र संभावना को भी नष्ट कर देता है ।" 63 किसी बात को सूत्र रूप में कहने की यह कला हमें प्रेमचन्द में भी मिलती है । जैसे "ईदगाह" कहानी में एक स्थान पर वे कहते हैं — " बच्चों की कल्पना मिथ्या को भी सत्य बना देती है । " इसी कहानी में कहा गया है — " बच्चे हामिद ने बूढ़े हामिद का पार्ट खेला था , बूढ़ी अमीना बालिका अमीना हो गई थी ।" इस एक वाक्य द्वारा कितना कुछ कह जाते हैं ।

वस्तुतः प्रेमचंद तथा मटियानी जैसे लेखकों में सूत्रों और सूक्तियों के रूप में जो उदाहरण हमें प्राप्त होते हैं, उनको इस समास-शैली के अन्तर्गत रख सकते हैं और इस प्रकार के सूत्रात्मक वाक्य या सूक्तियाँ मटियानी के तमाम-तमाम उपन्यासों में हमें उपलब्ध होते हैं। उनमें से कुछेक यहाँ उदाहरण के रूप में प्रस्तुत हैं —

§1§ सुंदर औरत समझदार भी हो तो वह अपना भविष्य खोज लेती है। §2§ जो औरत अपने स्वाभाविक गुणों से नहीं, बल्कि चालाकियों से किसी पुरुष को अपने वश में करेगी, वह जिन्दगी भर डरती रहेगी। §3§ आदमी की पहचान सिर्फ जोखिम उठा लेने से नहीं, निभा ले जाने से होती है। §4§ मुझे उन मूर्खों पर हंसी आती है, जो स्त्रियों के मामले में अपने-आपको बुद्धिमान समझते हैं। §5§ गृहस्थी शुरू करना, वास्तव में नदी में नाव उतारना है और नाव में यदि जगह-जगह छेद और दरारें हों, तो पतवार भी उसे डूबने से बचा नहीं पाती। §6§ सिर्फ प्रतिभा और परिचय ही नहीं अवसर भी आदमी की जिन्दगी में बहुत बड़ी भूमिका अदा करते हैं। §7§ आदमी हारता नहीं, हार मान लेता है। §8§ जो आदमी अपने भविष्य के प्रति डरा हुआ रहता है वह बहुत खतरनाक और नीच किस्म का आदमी होता है। अपने भविष्य की उम्मीदों में जीनेवाला आदमी ही उदार और मानवीय हो सकता है। §9§ आत्मविश्वास आदमी के चरित्रवान होने का सबसे बड़ा सबूत होता है। [64]

6. <u>प्रौढ़ि शैली</u> : आचार्य मम्मट ने अपने काव्यशास्त्र के के ग्रन्थ "काव्य-प्रकाश" में प्रौढ़ि नामक एक शैली का उल्लेख किया है जिसमें व्यास और समास इन दोनों शैलियों का सम्मिश्रण मिलता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के निबंधों में तथा प्रेमचन्द की कहानियों में इसके कई उदाहरण मिल जाते हैं। मटियानीजी भी एक महान शैली-कार हैं और उनकी भाषा-साधना को उनके सभी भावक व समीक्षक

बहुत सराहते हैं । अतः अनेक स्थानों पर हमें "प्रौढ़ि" शैली के दर्शन होते हैं । यहां उनके "माया-सरोवर " उपन्यास से एक उदाहरण प्रस्तुत है — " मैं काफी शर्मिन्दगी महसूस कर रहा हूं , मिसेज खोसला । मुझे अब यह साफ-साफ महसूस होने लगा है कि मेरा मानसिक स्तर आपके जैसा नहीं है । मैं शायद भावुक ज्यादा हूं । मुझ में संतुलन नाम की चीज़ , शायद , है ही नहीं ।" इसके जवाब में मिसेज खोसला कहती हैं कि " सो आई एम ... " अर्थात् मुझमें भी संतुलन कहां है ? तो यहां "सो आई एम ... " यह वाक्य समास शैली का है और फिर मिसेज खोसला जो अपने बारें में विस्तार से बताती है वह व्यास-शैली का xxxxx उदाहरण है । इस प्रकार यहां समास-शैली और व्यास-xxxx शैली का सम्मिश्रण उपलब्ध xxxx होता है । यथा —" मगर उस हद तक का असंतुलन मुझे न जाने क्यों गलत लगता है , जहां से संभला x न जा सके । तुम समझते होंगे , बी.के. , कि मैं "मोरलिस्ट " बनने का स्वांग भरने की कोशिश करती हूं । यों यह गलतफहमी अगर हो जाए , तो इसे बिलकुल स्वाभाविक समझूंगी । कोई औरत फिजीकली अट्रैक्ट करने की कोशिश भी करे ; उसका बिहेवियर भी काफी खुलेपन का हो और फिर वही औरत एक साधारण किस्म के बर्ताव पर एतराज भी करने लगे — देखा जाए तो यह सब "पैराडोक्स " के अलावा कुछ भी नहीं है । मगर शायद सारी समस्या यहीं पर से शुरू होती है । अपने व्यवहार और चरित्र के तमाम-तमाम विरोधीपन के बावजूद , जिन्हें अपने नैतिक होने का अहसास घेरे रहता है — एक निहायत अमूर्त किस्म की तकलीफ उनकी जिन्दगी की नियति बन जाती है । आफ्फोह , मेरी ज़ुबान में न मालूम कितना फालतूपन भर गया है । दो-चार फुलस्केप बोल जाने पर भी जो एक छोटी-सी बात कहना चाहती है हूं , वह ज्यों की त्यों xxxxx "चुइंगम" की तरह तलवे से चिपकी हुई सी महसूस होती है । तुम्हें बहुत ज्यादा xxx बोरियत तो महसूस नहीं होने लगी है , बी.के. ?" 65

7. धारा शैली : जहां कोई बात धारा-प्रवाह रूप में आती है । उसमें एक गति होती है, एक वेग होता है, जैसे पानी की धारा में होता है, तो ऐसी शैली को "धारा-शैली" कहते हैं । उसमें एक प्रकार की "ल्युसीडिटी" होती है । यहां इस धारा-शैली का एक उदाहरण उनके उपन्यास " उगते सूरज की किरन" से उद्धृत कर रहे हैं — " अहा रे, विधि का संजोग बलवान होता है, कि ऐसी बनैली छबिल्ला जयमाला बौरी की डोली वीरवंशी रणजीत बौर के आंगन में उतरी । ... सुजनो, सुमंगला बहू की कंचन-डोली आंगन के पथरौटों पर पगतलियों की छाप बाद में छोड़ती है, इष्ट-पितरों की सेवा, पति परमेश्वर की चाकरी का संकल्प पहले संजो लेती है । ... मगर अशु अमंगला तिरिया जयमाला बौरी ने अपने मायके के डोलियारों के हाथ कुंवारेपन के यार बाइस भाई कैरतों के नाम पाती भेजी कि — " हाय, मेरे प्यारे रंगीले-छबीले करैतो । काया आज मेरी बोहरीकोट के आंगन में उतर रही है, कि मेरा नाम जयमाला बौरी पड़ गया है । ... मगर मेरे लाडलों, जयमाला करैती का कलेजा तो तुम्हारी करैतीकोट में ही रह गया है । ... करैतीकोट के वनखण्डों में गुंजते जौल मुरलियों के स्वर मेरे कानों में गूंजने लगे हैं, कि — प्यारी जयमाला करैती, लाडिली जयमाला करैती, रूपुली जयमाला करैती । ... रंगीलो, करैतीकोट की दिशा हेरती हूं, भंवरीली आंखों में पनार छलछलाने लगते हैं, कि बाइस करैतों का सुख करैतीकोट में छूट गया । इस वीरान बोहरीकोट में अपनी तरुणाई कैसे काटूंगी मैं ? करैत मेरे सुजनो, जैसे जल से छूटे बिना मछली को जल का शोक नहीं व्यापता ... तुम रंगीलों के साथ खेल लगी रहती थी, तो तुम्हारा शोक नहीं व्यापता था । ... मगर आज जल-बिछुड़ी माछी-जैसी छूट गई हूं अपने रंगीलों से । कलेजा कसमसाता है । कण्ठ कलपता है । करैतीकोट की दिशा आंखों में चुभती है । मैं बोहरीकोट के सूखे पथरौटों में बिना नीर की

माछी जैसी डोली से उतर रही हूं । ... सुनो , मेरे लाड़ले करैत रंगीलो । ... जैसे कुंज-बेल जैसी धनी माया-मोहिनी तुम बाइस भाई करैतों की काया से मेरे मेरे रूप-सरूप की लिपटी हुई है , अगर ऐसी ही धनी तृष्णा-लालसा तुम मेरे पंछियों को भी मेरी है , तो मेरे वचन बांचना । हिया गांठ बांधकर रखना ... कि भूख की बेला का अन्नग्रास , प्यास की बेला की जल की कलशी , घाम की बेला की ठण्डी बयार और निर्मैली रात की सेज का सुख बिसर जाना , मगर अपनी प्यारी जयमाला करैति की सुधि मत बिसारना । माता-पिता की कंचन -डोली में बिठाई बोहरीकोट पहुंच चुकी हूं , मगर बौरों का वंश नाश करके उठा ले जाओगे , तो करैतकोट में ही सुख की सेज बिछाने पहुंच जाऊंगी । ... अपनी लाड़ली रूपुली का पहरूवा खसम रंगीले लड़ैतों का सबसे बड़ा दुश्मन होता है । सो सुनो हो , मेरे छबीले बाईस भाई करैतो । धन-धना , धना , रे । ... हे-ए-ए... "लागी बिधना चित्तमें ऐसी दुहरी चोट । काया बोहरिकोट में , हिया करैती कोट ।"[66]

8. <u>तरंग शैली</u> : "तरंग-शैली" जैसा कि उसका नाम है चित्त के तरंग की नाईं होती है और उसमें भाव और विचार रह-रह कर उठते हैं । मटियानीजी के उपन्यास "बर्फ गिर चुकने के बाद " में इस प्रकार की तरंग-शैली के कई उदाहरण मिलते हैं । एक उदाहरण यहां प्रस्तुत है —" जी , आप जो कुछ बताना चाह रहे हैं , मैं समझ रहा हूं । आपकी भी मां मरी थी , कुछ और प्रियजन भी मरे होंगे । आपकी प्रेमिका ने भी धोखा दिया था और आखिर में आपकी शादी खड़गपुर वाले तापड़िया परिवार की लड़की से हुई थी , जो अब कई बच्चों की मां है और वह अक्सर आपको आपके छोटेपन और कमियों का अहसास कराती रहती है । और अपने ××××××× ××× कारोबार में भी आपने अभी पिछले ही साल लगातार घाटे

देखे हैं और बर्दाश्त किया है । और आदमी को बर्दाश्त करना चाहिए । और उसे करना ही होता है, इसके बिना काम कहां चलता है ? ... अब अगर आप बीच में ही कुछ कह लेने की इजाजत मुझे दें, तो मैं आपसे कहना चाहूंगा कि काम चलाने के लिए जो कुछ आदमी बर्दाश्त करता है, उसकी अंतिम नियति सिर्फ यही होती है कि काम चलाने के लिए कापड़िया लड़की से प्रेम और काम चलाने के लिये तापड़िया औरत से शादी । काम चलाने के लिए गुड़-तिलहन का कारोबार और काम चलाने के लिये, पर्वतीय क्षेत्रों का सफर । ... अगर आपको स्मरण न हों, तो मैं दिलाना चाहूंगा कि जब काम चलाने के लिये भाषा का इस्तेमाल किया जाता है, तो उसका स्वरूप या तो यह होता है — " मीलोर्ड, मैं समाज की ऐसी सभ्यता पर कोलतार पोत देना चाहता हूं, जो हकदार को कठघरे में खड़ा करती है और गुनहगार को इन्साफ़ की गद्दी पर बिठाती है । ... और या यह कि — क्यों, पहचान नहीं पा रहे हो ?" [67]

(ख) उपन्यास के रूपबंध के आधार पर शैली के प्रकार :

मटियानीजी के उपन्यासों में रूपबंध के आधार पर भाषा-शैली निम्नलिखित भेद उपलब्ध होते हैं — 1. पनोरमिक शैली, 2. सरितोपम शैली, 3. दृढ़ और शिथिल-गठन शैली, 4. विषयाधिक्य और विषयाल्पत्व शैली, 5. आत्मसंभाषणात्मक शैली और 6. लोक-कथात्मक शैली । अब बहुत संक्षेप में उन पर प्रकाश डालेंगे ।

1. पनोरमिक शैली : समाज के विभिन्न आयामों, अनेक साम्प्रतिक विचार-प्रवाह, राजनीतिक मतवाद, समाज की जटिलता, प्रसंग-बहुलता, पात्र-बहुलता, आधिकारिक कथा के साथ अन्य अनेक प्रासंगिक घटनाओं और कथाओं का घटाटोप जिन उपन्यासों में होता है, उन उपन्यासों को "पनोरमिक नावेल्स " कहा जाता है । हमारे यहां जिन उपन्यासों को "महाकाव्यात्मक उपन्यास " कहा गया है,

उन उपन्यासों के गठन को "पैनोरमिक" कहा जा सकता है ।[68] "गोदान", "रंगभूमि", "झूठा सच", जिन्दगीनामा" आदि उपन्यासों की शैली को "पैनोरमिक" कहा जा सकता है, हालांकि लियो टाल्स्टाय कृत "युद्ध और शांति", शोलोखोव कृत " दोन नदी धीरे बहती है ", इल्या एहरनबर्ग कृत "आंधी", हेन्रिक सींकीवीच कृत " क्वो वाडिस ", जैसी "पैनोरमिक औपन्यासिक कृतियों का हमारे यहां अभाव है । तथापि मटियानीजी के "आकाश कितना अनंत है ", " हौलदार" तथा "नागवल्लरी " जैसे उपन्यासों में इस शैली की यत्किंचित् संभावनाएं दृष्टिगोचर होती है ।

2. <u>सरितोपम शैली (Roman Fleave) :</u> विस्तृति की की दृष्टि से पैनोरमिक उपन्यास का जो स्थान है, वही स्थान अगाधता की दृष्टि से "सरितोपम उपन्यासों " का है । जिस प्रकार नदी के बहने का कोई नियम नहीं होता, ठीक उसी प्रकार ऐसे उपन्यासों के प्रवाह का भी कोई निश्चित रूप नहीं होता । रोमां रोलां कृत " ज्यां क्रिस्तोफ " को उसके आलोचक "रोमन फ्लीव " का उपन्यास कहते हैं । इस उपन्यास की भूमिका में उसका अंग्रेजी अनुवादक गिलबर्ट केनन लिखता है — " द रीवर इज़ एक्सप्लोर्ड एज थो इट वेर एबसोल्युटली अनचार्टेड . "[69] इस उपन्यास के संदर्भ में स्वयं लेखक रोमां रोला का कथन है — " हिज क्रिएटर हेज सेइड धेट ही हेज आल्वेज कनसीव्ड एण्ड थोट आफ द लाईफ आफ हिज हीरो एण्ड आफ द बुक एज ए रीवर ... ~~xxxxxx~~ इट हेज नो लिटररी आर्टिफाइस, नो प्लोट . "[70] अर्थात् "मैं एक उपन्यास नहीं लिख रहा, मैं एक मनुष्य की सृष्टि कर रहा हूं । मुझे ऐसा ज्ञात होता है कि ज्यां क्रिस्तोफ एक नदी के समान है । इस उपन्यास के संदर्भ में कृष्णवदन जेटली कहते हैं — " मासिव एण्ड ड्रामेटिक, पावरफुल एण्ड सजेस्टिव, इट मैग्नेआइजिज अस इण्टू

एन एसेप्टंस आफ इट्स डेरिंग एण्ड आकप्टिमिस्टिक होप्स फोर द वर्ल्ड " .[71] अर्थात् उपन्यास पृथुल व नाटकीय है, साथ ही वह शक्तिसंपन्न व सांकेतिक है। वह पाठकों को खींचता है अपनी दर्पयुक्त सकारात्मक आशाओं के कारण।

ऐसे उपन्यासों में कोई पूर्व-निर्धारित प्लोट नहीं होता, बस उपन्यास है कि बहता चला जाता है। हिन्दी में अज्ञेय कृत "शेखरः एक जीवनी " को इस शैली का उपन्यास कह सकते हैं। मटियानीजी के उपन्यासों में "आकाश कितना अनंत है " तथा "जलतरंग" को कुछ-कुछ सरितोपम कहा जा सकता है।

3. दृढ़ और शिथिल गठन-शैली : उपन्यास की रचना-प्रक्रिया दो प्रकार की होती है — एक किस्सागो टाईप, जिसमें उपन्यासकार पहले से ही "प्लोटिंग" कर लेता है, और दूसरी पद्धति है जिसमें उपन्यासकार किसी एक बिन्दु से शुरू करता है और पात्रों और घटनाओं के माध्यम से कथापट अपने आप बुनता चलता है। प्रथम पद्धति भगवतीचरण वर्मा की है और दूसरी जैनेन्द्र की। किस्सागो टाईप के उपन्यासों का गठन दृढ़ होता है, जबकि दूसरी पद्धति के उपन्यासों का गठन शिथिल होता है। कोई यहां यह समझने की गलती नकरें कि दृढ़-गठन श्रेष्ठ होता है और शिथिल दोषपूर्ण। बल्कि दूसरे प्रकार की शैली को साधना बड़ा मुश्किल होता है। इस संदर्भ में डा. भारतभूषण अग्रवाल लिखते हैं — " शीघ्र ही वे (जैनेन्द्र) अपने मंथन में लीन हxxxxx रहने लगे कि अपने हाथों लिखना भी उन्हें असुविधाजनक लगने लगा और वे अपनी कहानियां, निबंध और उपन्यास भी बोलकर लिखवाने लगे। "परख" और "सुनीता" जैनेन्द्र ने अपने हाथ से लिखी हैं, "त्यागपत्र" और "कल्याणी" बोलकर लिखवाई गई हैं।"[72] अब इस निकष पर मटियानीजी के उपन्यासों को देखें तो "होलदार", "चिट्ठीरसैन", "चौथी मुट्ठी", "एक मूठ सरसों", "रामकली" प्रभृति उपन्यासों

में दृढ़-गठन शैली मिलती है ; किन्तु "चन्द औरतों का शहर", "आकाश कितना अनंत है", "बर्फ गिर चुकने के बाद" जैसे उपन्यासों का का गठन कुछ-कुछ शिथिल है ।

4. विषयाधिक्य और विषयाल्पत्व वाली शैली : अंग्रेजी में इसे "ओवरप्लोटिंग" तथा "अण्डर-प्लोटिंग" कहते हैं । वस्तुतः विषयाधिक्य या विषयाल्पत्व अपने आप में दोष या गुण नहीं है । ये स्थिति सापेक्ष हैं । उपन्यास का फलक यदि विस्तृत हो तो उसमें विषयाधिक्य होना चाहिए । नहीं होने पर उसे दोष माना जाएगा । ठीक इसके विपरीत उपन्यास का कलेवर यदि लघु उपन्यास का है तो विषयाल्पत्व उसमें कलात्मकता का सृजन करेगा । वहां उसे दोष नहीं गुण माना जाएगा । रांगेय राघव के "विषादमठ" तथा "कब तक पुकारूं" ; प्रेमचंद के "गोदान" तथा "रंगभूमि" ; यशपाल के "झूठा सच", गिरिराज किशोर के "पहला गिरमिटिया", सुरेन्द्र वर्मा के "मुझे चांद चाहिए" का विषयाधिक्य खटकनेवाला नहीं, बल्कि उसकी "विषय-निबिड़ता" (इनटेनसिटी आफ प्लोट) के कारण उपन्यास अधिक कलात्मक बन पाए हैं । मटियानीजी के उपन्यास "आकाश कितना अनंत है" में विषयाधिक्य की कला मिलती है । उनके अन्य उपन्यासों में विषयाल्पत्व के कारण उनकी कलात्मक घनता में वृद्धि हुई है ।

5. आत्मसंभाषणात्मक शैली : पात्रों के चैतसिक यथार्थ को उभारने ने लिए आत्मसंभाषणात्मक शैली का प्रयोग किया जाता है । उसमें पात्र अपनी तरफ से संभाषण देता चलता है । "बर्फ गिर चुकने के बाद" इस शैली में लिखा गया उपन्यास है । वैसे इसका आंशिक प्रयोग "आकाश कितना अनंत है", "चन्द औरतों का शहर", "माया-सरोवर" आदि में भी मिलता है । "बर्फ गिर चुकने के बाद" में से एक उदाहरण यहां

प्रस्तुत है — " अब अन्तहीनता शब्द को आप फिर से लें और खुद ही देखें कि प्रेम जब दूसरों के लिए भी होता है — सभी के लिए समान रूप से सम्भावनापूर्ण — तब वह कैसे वर्षा और बर्फ के बाद की उस अलौकिक प्रकृति की तरह अनंत होता है। जिसे आप अनुभव करते हैं कि सिर्फ आपके लिये है ... लेकिन वह जितनी आपके लिये, उतनी ही दूसरों के लिए भी होती है। ... और स्त्री भी, हो सकता है यह स्वीकार xxxxxx करते हुए आपको सिर्फ विषाद का ही अनुभव हो सके, उतनी ही दूसरों के लिये भी होती है। जितनी आपको सिर्फ अपने लिये लगतीं थी और आप यह कल्पना कर सकने में असमर्थ हो जाते थे कि जब विश्वास सिर्फ अपने तक ही सीमित हो जाता है, तो वह विभ्रम बन जाता है और विभ्रम जितना पुराना होता जाता है, आपको वायु-विकार से जकड़ता जाता है, और वायु-विकार ऊंचाइयों पर जाते वक्त हमेशा बाधा डालता है।" 73

6. <u>लोककथात्मक शैली</u> : मटियानीजी के उपन्यासों में कुछेक उपन्यास तो पूर्णतया लोककथा-शैली पर xxx आधारित हैं, जैसे " मानसरोवर के हंस " तथा "उगते सूरज की किरन"। इन उपन्यासों की शैली तो पूर्णतया लोककथात्मक शैली ही है, परन्तु उनके अन्य कुमाऊं की पृष्ठभूमि वाले उपन्यासों में भी प्रसंगानुरूप लोककथात्मक शैली का प्रयोग लेखक ने किया है, जैसे "हौलदार", "चिट्ठीरसैन", " एक मूठ सरसों " तथा "चौथी मुट्ठी" इत्यादि उपन्यासों में। इसके अलावा उनके "किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई xxxxxxxx " उपन्यास में भी कहीं-कहीं लोककथा-शैली का समावेश लेखक ने किया है। यहां इस शैली का एक उदाहरण उनके उपन्यास "मुख सरोवर के हंस " से उद्धृत कर रहा हूं —" मेरा प्यार न ठुकराओ, बकौल मेरे प्यारे। कि तुम्हारे नामके बाईस दीये अपने महल में जलाऊंगी, तो बाती उनमें एक रहेगी। तुम्हारे नामका एक

घाघरा पहनूंगी , पर उसके पाट { घेरे } बाईस होंगे । एक चोली पहनूंगी कि सात रंग इन्द्रधनुष के भी होते हैं , मेरी चोली में बाईस रंग होंगे । तुम्हारे नाम पर , सिर पर बाईस सिन्दूर रेखाएं भरूंगी । बाईस लटियां करूंगी , बाईस फुन्ने लगाऊंगी , कि लटी-लटी का गुंथन , फुन्ने-फुन्ने का गुंफन और होगा । और ऐसी लटियों को बाईस कंघियां लगाऊंगी , कि सात जात के तेल आपकी गद्दी चम्पावत नगरी में होते हैं , पन्द्रह जात के अपने डोटीगद्दी से मंगाऊंगी । रानी रूपाली का वचन खाली नहीं जाएगा , बफौल मेरे प्यारे , कि बांसुरी के सात रन्ध्रों से , कि सितार के सात तारों से सात-सात अलग-अलग स्वर निकलते हैं , मगर मेरे कण्ठ की बाईस पुकारों से एक ही स्वर निकलेगा , बफौल मेरे प्यारे । बफौल मेरे प्यारे । बाईस धातुओं के बाईस पिंजरे तैयार कराऊंगी , और उनमें चम्पावत के रनकुरी- मनकुरी , हिमालय के स्यांकुरी-क्यांकुरी बनों के बाईस जात के तोते पालूंगी । पर मेरे बाईस पिंजरों के बाईस तोते भी एक ही बोल रटेंगे — बफौल मेरे प्यारे , बफौल मेरे स्वामी । आज मुझ अकेली को बाईस रागिनियों की एक वीणा , बाईस स्वरों की एक बांसुरी बनने दो , कि मैं बाईस सेजों की एक सोने वाली सेज-फूल बिछाऊंगी , देह सुवास फैला जाऊंगी । ... बजते-बजते वीणा की झंकार नहीं थमती , बहते-बहते पनार की धार नहीं थमती , और कहते-कहते रानी रूपाली की बात नहीं थमती कि उसके इष्टों को नैवेद्य , पितरों को पिण्ड नहीं मिले । पर्वत के ऊंचे शिखर हिलते हैं , खुद गिरते हैं , पर जब तरुणी त्रिया के सुघड़ कपोल-कपोत पंखों की तरह फड़फड़ाते हैं , स्तन-फली डार से झूलते हैं , पुरुषों का पतन होता है ।[74]

{ग} परिवेश के आधार पर भाषा-शैली के प्रकार :

उपन्यास में परिवेश और वातावरण के तत्व का तो सविशेष महत्त्व है । यथार्थ-परिवेश निर्माण के लिए लेखक अपने प्रतिपाद्य

अंचल या स्थान की भाषा या बोली में उपन्यास को ले जाता है । इसके कारण लेखक की शैली में परिवर्तन या बदलाव आता है । मटियानी जी के उपन्यासों में इस दृष्टि से हमें निम्नलिखित भाषा-शैलियां उपलब्ध होती हैं — 1. कुमाऊं की xxxxxxलोकबोली वाली शैली , 2. नगरीय परिवेश की आम-फहम शैली , 3. बम्बइया बोली वाली शैली , 4. उस्तादों तथा गांजा-चरस वाले और भंगेड़ियों की शैली आदि-आदि । अब बहुत संक्षेप में इन पर विचार किया जाएगा ।

1. <u>कुमाऊं की लोकबोली वाली शैली</u> : मटियानीजी के ग्रामभित्तीय उपन्यासों की पृष्ठभूमि कुमाऊं प्रदेश है । अतः उनके "हौलदार" , "चौथी मुट्ठी " , " एक मूठ सरसों " , " नागवल्लरी" , "xxxx "गोपुली गफूरन" आदि उपन्यासों में हमें कुमाऊं की लोकबोली वाली शैली मिलती है । यहां पर उनके उपन्यास "हौलदार" से एक उदाहरण प्रस्तुत है :" ह पंडित्याण भौजी ! "फल रसीला टेस्टदार — मगर , लगा दूर पेड़ की टुक्की में , अपनी पहुंच से दूर — यार खाने वाले , तू मजबूरी का मारा , हसरत-भरी नज़रों से देखता रह गया " वाली मेरी भी हो रही है , तुम्हारे आगे । ई हो , पंडित्याण भौजी , दहीं की ठेकी जमी मलाईदार , घर-बिल्ली का कहीं पता नहीं , मगर बनढ़इवा ‖ वन-बिलाव ‖ भी भूख मारने से लाचार — तुम्हारी मतकाकड़ी जैसे दिन-पर-दिन और ज्यादा मिठास पलड़ने वाले जोबन के आगे तो धौलछीना के हर शख्श की कुछ ऐसी हालत हो जाती है । ... हरेहर , ठीक है , कि नहीं — दुरगुली भौजी ? "वार के कोढ़ी की पार के कोढ़ी को नामधराई जैसी तुम भी करती हो । खुद तो यह हालत रही , कि ऐसा बगीचा एक यही देखा , कि जिसके फल न नरों के हाथ आए , न वानरों ने चखे । ... और xxxxxxx सैमावतारी हरकसींग का अखंडित - ब्रह्मचर्य कलेजी में कुरकुरी-जैसी लगा

रहा है । ... पंडित्याणी भौजी , नदी के पत्थरों के ऊपर घन की चोट , पत्थरों के नीचे छिपी मछलियों को मारने के लिए मारी जाती है । उड़ियार (खोह) के बाहर धुवां उसके अन्दर के छेदों में छिपे हुए सौलों को (स्याही जानवर) मारने के लिए लगाया जाता है । ... याने , बाहर से भी अकसर चोट अन्दर की तरफ मारी जाती है××××××××××××××× है । खैर , बाहर से जो चोट अन्दर को मारी जाती है , उसको तुम क्या समझोगी , पंडित्याण भौजी ? ... खैर , " ××× अखरोट की दाणी , छिलकों के भीतर दानेदार भुट्टा होता है , यह माया पुरानी । " कह रखा है । और जहां तक मेरे यहां किस कार्ज-विशेष से आने का सवाल है , बिना मतलब-विशेष की कोई चीज़ दुनिया में होती ही नहीं है । ... अब पंडित्याण भौजी , तुम्हींने यह जो दो टांगों के बीच में गोल-गोल ठौली अटका रखी है और उसके अन्दर लम्बी-लम्बी दूद की छरैंकें मार रही हो , तो यह भी तो कार्ज-विशेष ही है न ? 75

यहां हरकसींग जो कुमाऊं के लोकदेवता सेमराजा का डंगरिया है ×××× गांव की पंडिताइन से छेड़खानी की बातें कर रहा है । इस बीच में भैंस लात मारती है और दुरगुली पंडिताइन के दाएं घुटने में चोट लग जाती है । हरकसींग को इस पर हंसी आती है , तब पंडिताइन का क्रोध हरकसींग पर उबल पड़ता है — " मैंल कौं , भैंस मुश्किलों के साथ पंगुरी हुई है , ऐसी तीर-पुर की बेमतलब बातों से उखड़ ××××× जाएगी , तो मेरा दुकानों में दूध देने का हर्जा हो जाएगा । तुम्हारा क्या है ? निगरगंड मोटा , नफा न टोटा । न आगे ××××× आनसींग , न पीछे पानसींग — टीकमसींग की नज़र अपनी ही ×××× टांग तक । " वाली हालत है । ... बस , बस , मैंल कौं , रहने दो अब अपना सैम-चरित्तर । ... दुरगुली पंडित्याणी को तुमने समझ क्या रखा है ? ... जरा बखत बिलमाने को हंसी-ठट्ठे से बोल लेती हूं , कि अरे चार दिन की जो अब जिन्दगानी है , उसे हंसी-खुशी से

काट देना है , तो तुम धौलछीना के बिना गुंसाईं (मालिक) के सांड लोग दुरगुली को .... की ही तैयारी करने लगते हो । ... मैल को , अपने अखंडित बर्मचर्य वाले सैमावतार को अपनी भानावतारिणी गोपुली के लिए ही संभाल के रखे रहो -- दुरगुली पंडित्याण तो ऐसे चोर-चमार बर्मचर्य पर थूक के छोड़ देती है ।" 76

इस प्रकार कुछ तो गोपुलीवाले अप्रत्याशित-लांछन से और कुछ सैमावतार के अपमान से हरकसींग का शरीर मारे रोष से झनझना उठता है -" हिंगोर्त ... । .... पंडित्याणी स्यूनारी , नर के ठ्ठे में देबों की इन्सल्ट करती है ? ... छोर्त ..... अन्यायी-अज्ञानी बचन बोलोगी , अपने बुरे हाल को भुगतोगी । ... खबरदार ... छोर्त " 77

कुमाऊं प्रदेश के पुरुष अधिकांशतः फौज में होते हैं । वे लोग अपने लोगों के बीच जब बात करते हैं , तो कई बार अंग्रेजी के शब्दों को , कहीं तो उसके अपभ्रष्ट रूप , प्रयोग करते हैं । उसका एक उदाहरण देखिए :—

" तो मैं कह रहा था , सैप , (डूंगरसिंह अपनी ट्रेनिंग के बारे में बता रहा है) कि बिलैत वालरों की लाम में तीन महीने तक तो सिर्फ लेफ्ट-रैट - अटैनशन की परैक्टिस कराते थे , कि कहीं फैर करते में पांव नहीं गलत पड़ जाए ... और आप लोगों की लाम से तो गांव का भूमिया देवता ही बचाए , तीन महीने में ही लेफ्ट-रैट , अटैनशन-अबोटन और कुक-मारच , डबल-मारच । बन्दूक के अन्दर सात जात की मशीनरी कौन-कौन-सी होती है , वह तो बताते नहीं ... बस , चांदमारी की फैर करो । हो गई , सैप , अपने किस्मत की सबसे बड़ी फैर हो गई । ... घड़ी-भर तेल से ततेरी , नौनी से चुपड़ी हुई टांग का शिकार बनना बाकी रह गया था , जो मैं इस गांधी महाराजा की लाम में भर्ती हुआ ।" 78

अन्य प्रकार की नौकरियां करने वाले लोगों में भी यही प्रवृत्ति पायी जाती है । यथा — " मोतीराम मास्टर बोले — " अच्छा हो , उमादत्त गुरू , थैंक्यू फार टी-गिलासेज । तुम्हारी कुल बातों को मिलाके , (पोस्टमास्टर साहब की बात तो मैं कह नहीं सकता) मगर मैं खुद इस नतीजे पर पहुंचा हूं , कि "गौरी-गौरी , पेट में गड़बड़ , मन में औरी (और ही) — सो धेट , आई एम भेरी सोरी । भेरी सोरी फोर धिस-थेट , कि हमने बेकार में अपने ~~स्कूल~~ इस्कूल , और पोस्ट-ऑफिसों का हरजा किया । .... जयदत्तजी बोले — " अरे , हेडमास्टर साहब ? दरअसल पोजीशन यह हो गई है , कि उमादत्त को हरकसींग-मानसींग आदि जिमदारों ने थोड़ा-थोड़ा धचका दिया है । .... उमादत्त ने चणाक्क उठकर , जयदत्तजी का कन्धा पकड़ के , जोर-जोर से , धचबचा दिया ~~xx~~ — "म्यूजिक मास्टर साहब, धचकाता भी वही है , जिसमें कुछ कुव्वत होती है । ... आप क्या परशुराम का पार्ट खेलेंगे ? जरा-सा हेड-मास्टर साहब ने पांव जमीन पर पटका , तो आपके मुट्ठी के अंदर धुसी हुई कैंचीमार सिगरेट बाहर छटक गई ... अगर कहीं हरकसींग या आनसींग ने ऐसा किया होता , तो आप मय कैंचीमार सिगरेट के धरती पर टोटिल हो जाते , इस बात की गैरन्टी मैं खुद दे सकता हूं ।"79

2. <u>नगरीय परिवेशवाली आम-फहम की शैली</u> : कुमाऊं की ग्रामीण पृष्ठभूमि के अतिरिक्त मटियानीजी के कई ऐसे उपन्यास है जिनमें नगरीय परिवेश का चित्रण हुआ है । वहां उन्होंने आम-फहम की भाषा का प्रयोग किया है जिसमें अरबी-फारसी या उर्दू के भी कई शब्द पाये जाते हैं । यथा — "बोरीवली से बोरीबन्दर तक" उपन्यास से एक परिच्छेद उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत कर रहा हूं जिसमें दादा नूर के सामने अपने दर्द को व्यक्त कर रहे हैं —" नूर मेरा है । इतना बंदोबस्त भी तो मै नहीं कर सका , के मेरे बाद भी तुम अपने दिन गुजार सको । रोटी जिन्दगी की सबसे बड़ी जरूरत

है , नूर । ... मुझे अफसोस है , कि मजबूरी की हालत में तुम्हें मैं लाया था , मजबूर ही छोड़ जाऊंगा ... मैं अपना फर्ज पूरा न कर सका , नूर ,। " दसदा की आंख के आंसू कंजूस के दान के पैसों की तरह गिरने लगे । ..... " यही तो गम है नूर । ऐसा लगता है , जैसे कोई मेरे कलेजे को चीर रहा है । कोई ऐसा रिश्तेदार भी नहीं , जिसे तुम्हें सौंप सकूं । मुंगरापाड़ा तो नंगों की बस्ती है । आदमी जिसम से नंगा हो , तो उतना बुरा उतना खतरनाक नहीं होता , नूर , जितना दिल से नंगा हो जाने पर होता है ।" 80

3. बम्बइया-बोली वाली शैली : मटियानीजी के "किस्सा नर्मदाबेनगंगूबाई " , "बोरीवली से बोरीबन्दर तक " , " कबूतरखाना" आदि उपन्यास मुंबई की पृष्ठभूमि पर आधारित है । उनमें कई स्थानों पर "बम्बइया-भाषा" की शैली मिलती है । यहां "किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई " से एक उदाहरण द्रष्टव्य है —" फकत दोन-दोन ... " केले खाने की कोई इच्छा न थी , फिर भी मांग बैठा — " ज्यास्ती काय करेगा ? एकच माणूस है हम । " केलेवाली उसकी अनगढ़ मराठी बोली पर हंस पड़ी — " क्या हो , पंडित महाराज ? तुमेरे को मराठी नहीं आता ना ? ? ... फकत दोपंच केलों से क्या करेगा ? घर ऊपर बाल-बच्चा लोग ... कृष्ण को याद आया - होटल में उसकी बदली के आर्डर वा ले ने एक दिन बताया था — " भैयाजी , इस मुंबई शहर की कुछ वार्ता ही नको पूछो । यहां संत तुकाराम की , ज्ञानेश्वर चोपड़ी के पाना में फ्राई मुर्गी-कबाब बिकता है । रामायन-महाभारत की चोपड़ियों के पाना ऊपर रगड़ा-दहींबड़ा । ... बगैर वस्तरे का हजामत और बगैर तूफान का कयामत येच शहर में होता है । ... वो केलेवाली से अपन केला लिया था न ? एसेच जवानी का सिनेमा दिखाकर , ये लोग चार आणा डझन [दर्जन] के केले दहा आणा [दस आने] डझन का हिसाब से बेचता है । ... केले का दाम अलग , नखरों का दाम अलग ।" 81

इसी उपन्यास में स्वयं लेखक ने "बम्बइया" भाषा पर प्रकाश डालते हुए लिखा है — " यों भी बम्बई की खास अपनी एक हिन्दुस्तानी है जो खड़ी बोली और उर्दू की शैली में बोली जाती है, पर उसमें मराठी-गुजराती से लेकर , पंजाबी , बंगाली , फारसी , तामिल-तेलुगु और ठेठ मैथिली-अवधी के शब्द भी रहते हैं । बात यह है कि बम्बई में जब कोई मद्रासी या बंगाली हिन्दी बोलता है , तब वह , बीच-बीच में , एकाध अपने-अपने शब्द भी लगाता जाता है । ऐसा ही मराठी-गुजराती और तेलगू भाषी भी करते हैं । इस तरह बम्बई की आम भाषा की अपनी खासियत है । न्यूनाधिक , इस शहर में ही नहीं , पूरे बम्बई राज्य में हिन्दी का यही "बम्बइया-रूप " प्रचलित है ।"[82]

५. उस्तादों तथा गांजा-चरस वाले और भंगिड़ियों वाली शैली :

मटियानीजी के कुछ उपन्यासों में मुंबई के दादाओं , जिनको उनके चेले-चांटी , उत्ताद या "वस्ताद" कहते हैं , तथा गांजा-चरस पीने वाले और भांग पीने वाले पात्र मिलते हैं । उनकी भाषा भी बड़ी निराली होती है । मटियानीजी ने उसको यथार्थतः उपन्यासों में लाने की [illegible] चेष्टा की है । प्रेमचंदजी के लिए निरालाजी ने कहा था कि "आँखें किसी के पास हैं , तो इसीके पास है " ; ठीक उसी तरह हम मटियानीजी के संदर्भ में कह सकते हैं कि " कान यदि किसीके पास हैं तो मटियानीजी के पास हैं । " भाषा की जो हूबहू नकल उन्होंने उतारी है वह उनकी "श्रवणशक्ति" और उसकी "ग्रहणशक्ति " का कमाल है । यहां उपन्यास "किस्सा नर्मदाबेन" गंगूबाई " के पोपट के उस्ताद की भाषा का एक उदाहरण देखिए :

"बस , और बखिए मत उघाड़ अकिल के चमचम ! कसम हाजी मलंग शा की रह गया तू तू कबर-का- कबर में ही । गुरु की भक्ति बेकार गई । यह तो वही मिसल हुई , बेटे , कि बारा बरस दिल्ली में रहे , क्या किया , भाड़ झोंका ! तून पोपट असिल में तिरिया के चार

नहीं , सिर्फ दो ही भेद होते हैं । .... सुन , इस बम्बई में , जहां न फुटपालियों को चैन है , न महलों को ही आराम — तिरिया के सिर्फ दो भेद होते हैं — सेठानी और घाटन । ... पर , हाथीदांत का बटन दिखाने से , हाथी को तू क्या समझेगा ? तुझे तो बारीकी से समझाना पड़ेगा । सुन , तिरिया के जो दो भेद मैंने देखे-सुने , एक दिलचस्प किस्से के रूप में , तुझे सुनाता हूं । बेटे , वस्ताद से मोहब्बत की यह बेजोड़ दास्तां , इश्के-कामरानी का यह लाजवाब किस्सा सुन — सुन कलन्दर , देसाई भुवन सातवां माला , कालबा-देवी , मुंबई नं. 2 के शानदार फ्लेट में रहने वाली सेठानी नर्मदाबेन और गांव पिलखोली , पोस्ट-तालुका रैंसी , जिल्हा सतारा , हाल मुकाममकनजी बमनजी की चाल , खोली नं. पंधरा , भुलेश्वर , मुंबई नं. 2 की गंगूबाई का यह किस्सा है । ... पहली के पास दिल था , दिलदार थे , दौलत थी । दौलत के नशे में उसने दिल भी गंवाया , दिलदार भी । .... दूसरी के पास सिर्फ दिल था , जिसे दांव पर लगाकर , दिलदार और कलदार बटोरने के कई सुनहरे मौके उसके सामने आए , पर उसने "एक आपे ला दोन , दोन आपेला तीन " केले तो बेचे , दिल न बेच सकी ।" 83

(घ) अन्य आधारों की दृष्टि से शैली के प्रकार :

उपर्युक्त वर्गीकरण के अतिरिक्त शैली के कुछ और भेद भी हमें मटियानीजी के उपन्यासों में उपलब्ध होते हैं । यहां ऐसे कतिपय भेदों की बहुत संक्षेप में चर्चा करने का हमारा उपक्रम है । ऐसे भेदों में निम्नलिखित मुख्य हैं — 1. लोकगीत शैली , 2. कविता के उद्धरण वाली शैली , 3. चेतनाप्रवाह शैली और 4. एब्सर्ड शैली । इन विविध प्रकार की शैलियों की संक्षिप्त चर्चा हम यहां करेंगे —

1. लोकगीत शैली : मटियानीजी के जो उपन्यास कुमाऊं की पृष्ठभूमि पर आधारित है, उनमें लेखक ने कई स्थानों पर लोकगीतों का प्रयोग किया है। "हौलदार" उपन्यास में जब डूंगरसिंह किसी दूसरे गांवों से धौलछीना के वनांचलों में घास काटने आयी किसी तरुणी को छेड़ता है, और इसकी शिकायत जब डूंगरसिंह की भौजियों तक पहुंचती है, तो वे हंस-हंसकर डूंगरसिंह को सुनाकर गीत गाती हैं जिसमें वहां की संस्कृति का बोध होता है —

" भैंसी पड़ी खाव,
हाथ में कांगिल त्यारा, गल में ~~xxxxxxx~~ रुमाव —
माछी कूंछे, भिकान हाथ ... फुटिया टिपाव।
हल छूणी मरी ज्याछै, रिभड़ को काव।
देवरा डूंगरसिंगा, धन तेरी काव। ....

अर्थात् देवर डूंगरसिंह हो, धन्य है तेरी लीला। जैसे भैंस तालाब में पड़ी रहती है, ऐसी बेफिक्री से तू घर में पड़ा रहता है, और बाहर निकलता है जब घर से, तो हाथ में तेरे कंघी रहती है और गले में रेशमी रुमाल बंधा रहता है। यों दैला बनकर, जो तू औरों की बहू-बेटियों को छेड़ता है, सो तू उस बैल जैसा है जो खेत जोतने के नाम पर तो गर्दन धरती पर टेकता है, लेकिन लड़ने के लिए घुटनों से खड्ड खोदता है। पर क्या करें, किस्मत तेरी फूटी हुई है, कि मछली पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाता है, तो उसमें मेंढक ही आता है। [84]

इस प्रकार के स्थल उपन्यास में आते हैं जहां पर मटियानीजी लोकसंगीत के माध्यम से आंचलिक परिवेश को मूर्त कर देते हैं। इसी उपन्यास में गोविन्दी अपने प्रेमी ~~xx~~ को भावी पति तथा ग्वाले के वेश में कल्पना कर अंदर ही अंदर खुश होती है और अपने प्रियतम की कही बातें याद करती है। यथा —

" मेरी सुवा ~~xxxxxxx~~ गोविन्दा, वे, छाल छूट ले नैं हिट,
खपकनी ~~xx~~ झांवरा, वे, छाल छूटे ले नैं हिट।

तेरि माया जाणी छ , वे , छाल छूटे ले नै हिट
मेर हिया रपीछ , वे , छाल छूट ले नै हिट । [85]

अर्थात् मेरी प्रियतमा गोविन्दी वे , स्फूर्त पावों न चला कर तू । अरे , तेरे चरणों के झांवर खनकते हैं , तेज कदमों से न चला कर तू । तेरे तेज चलने से , तेरे प्यार का आभास मिल जाता है , वे , तू जल्दी-जल्दी पांव मत उठाया कर अरे रे , मेरा मन विह्वल होने लगता है । वे , तू क्षिप्र गति से न चला कर ।

2. कविता के उद्धरण वाली शैली :उपन्यासकार अपने भावों या विचारों के प्रकाशन के लिए , या अपने पात्रों के भावों की अभिव्यक्ति के लिए कविता के उद्धरणों का प्रयोग करता है । अज्ञेय कृत " नदी के द्वीप" उपन्यास में अंग्रेजी तथा बंगला कविता के कई-कई उद्धरण मिलते हैं । मटियानीजी भी अपने उपन्यासों में कई बार इस शैली का प्रयोग करते हैं । उनके उपन्यास " बर्फ गिर चुकने के बाद " से यहां एक उदाहरण प्रस्तुत है —

" कोई नहीं बता सकेगा कि कैसे संभव हो सकेगा / मैं भी नहीं / लेकिन होगा / अगली ही पुष्प-ऋतुमें / तुम स्वयं अनुभव करोगी मुझे / मैं भी नहीं जानता कि कैसे / प्रार्थनाओं से या कि प्रार्थनाओं में / लेकिन संभव होगा / मेरा समुद्र की तरह का बहना / और / फूलों की तरह का उगना ×××/ — हालांकि इन दोनों संभावनाओं में / अंतर है / ... लेकिन जो कुछ भी तुम्हारे और / मेरे बीच घटित या संभव हुआ / समुद्र की तरह बहने या फूलों की तरह के / उगने से भी ज्यादा अलौकिक और अविस्मरणीय / जबकि मैं सिर्फ तुममें था / और हमारे ऊपर / — या कि सिरहाने ? — सिर्फ एक ऊंचा दरख्त / था संत पाल गिरजाघर की प्रार्थनाओं से भरा हुआ / कोई नहीं बता सकेगा कि कैसे / मैं भी नहीं / कि कैसे संभव हुआ वह मेरे प्रेम का / प्रार्थनाओं / और फिर पक्षियों में

परिवर्तित होना / लेकिन हुआ और अगली ही पुष्प-ऋतु में / फिर संभव होगा तुम्हारे चारों ओर / मेरा समुद्र की तरह का बहना / और फूलों की तरह का उगना ।" 86

3. <u>चेतनाप्रवाह शैली</u> : अंग्रेजी में इसे "स्ट्रीम स्ट्रीम आफ कोइन्सीयसनेस " कहते हैं । मनोविज्ञान के बढ़ते प्रभाव के कारण "चेतना-प्रवाह" शैली के उपन्यास अब मिलने लगे हैं । जेम्स जायस का प्रथम उपन्यास " ए पोर्ट्रेट आफ द आर्टिस्ट एज ए यंग मेन " (सन् 1914) इस शैली का प्रथम उपन्यास माना जाता है । उसके बाद जायस का ही दूसरा उपन्यास "यूलीसिस " इस शैली का एक अद्भुत उपन्यास है । इस उपन्यास का अंतिम वाक्य लगभग 40 पृष्ठों तक चलता है । हिन्दी में प्रभाकर माचवे कृत उपन्यास "सांचा" में इस शैली के यत्किंचित दर्शन होते हैं । मटियानीजी में प्रायः यह प्रवृत्ति मिलती है कि वे अपने समय की तमाम शैलियों का कहीं-न-कहीं प्रयोग करते हैं । उनके उपन्यास " बर्फ गिर चुकने के बाद " में कई स्थानों पर हमें इस शैली के दर्शन होते हैं । यथा —

" परमात्मा , जब मैं उसके साथ था प्रेम में , तभी प्रार्थना में भी हुआ । ... तभी मैंने देखा कि मेरे शरीर में असंख्य रंगों वाले पंख उग रहे हैं । मैं लम्बी तथा ऊंची उड़ान भरने से पहले चहचहाते हुए पक्षियों के साथ , अपनी प्रेमिका के शरीर पर से आकाश की यात्रा पर चल पड़ा हूं ... मैं प्रेम से प्रार्थना और प्रार्थनाओं से ऊंचाइयों पर गया हूं ... वह जितनी सिर्फ मेरे लिए थी , उतनी सबके लिए हुई ... मैंने देखा कि योरोप के समस्त प्रार्थना-गृहों में लोग ... स्त्री और पुरुष ... वृद्ध और बच्चे ... सामूहिक रूप से मेरे लिए प्रार्थना कर रहे हैं कि ... हे परम पिता , इसे स्त्री-वंचना की जगह , बर्फ गिर चुकने के बाद की प्रशांतता देना । " 87 इस प्रकार हम देख सकते हैं कि जैसे हमारी चेतना में भावों या विचारों का जो प्रवाह होता है उसका कोई क्रम नहीं होता , कोई सिलसिला नहीं होता , ठीक

उसी तरह यहां भी होता है ।

4. एब्सर्ड शैली : एब्सर्ड शैली भी "चेतना-प्रवाह शैली" जैसी होती है । किंतु "चेतना-प्रवाह" में बेसिलसिलेवार ही सही पर भावों या विचारों का प्रवाह होता है । जबकि एब्सर्ड शैली में कहीं कxxx की ईंट , कहीं का रोड़ा वाली प्रवृत्ति मिलती है । "बर्फ गिर चुकने के बाद " उपन्यास का प्रारंभ ही इस प्रकार की शैली से हुआ है — " क्यों , पहचान नहीं पा रहे हो ? उसने अभी तक , शुरू होती हुई गर्मियों की हलकी धूप में भी , "ओवरकोट" ओढ़ रखा था और सिर्फ उसका चेहरा था , जो दफनाने के तुरंत बाद बाहर निकाल लिये गये शव की-सी आकस्मिकता में मेरे सामने फैल गया था । ... आपने कभी अपनी जिन्दगी में किसी खूबसूरत औरत को मरते हुए देखा है ? खैर , यह सवाल फिलहाल मैं अपने तक ही सीमित रहने देता हूं और आपसे सिर्फ यह कहना चाहता हूं कि अगर बचपन में कभी आप पानी में डूबे हैं और पापी के भीतर होने वाली मौत का साक्षात्कार आपने किया है और फिर भी आप जीवित रह गये हैं और पानी बाहर की दुनिया को फिर से देखा है और मैं फिर इस बात पर जोर देना चाहूंगा कि बचपन में , क्योंकि बाद में आदमी के लिये मौत की वह मायावी रहस्यमयता खत्म हो जाती है और सिर्फ भय रह जाता है और यह , इस किस्म का भय , निहायत क्रूर और सपाट होता है , जब कि मैं आपको उस रहस्यमय भयावहता का अहसास कराना चाहता हूं , जबकि पानी हमारे लिए कोलतार की तरह काला और गाढ़ा होता जाता है और हम अपने शरीर पर मछलियों के स्पर्श का अनुभव करते हैं और ... मैं फिलहाल , पानी से बाहर उछाल दी गई मछलियों की तरह तड़पते हुए-से शब्दों में हूं और अपनी इस दयनीय अवस्था को स्वीकार करता हूं । मैं खुद अनुभव कर रहा हूं कि उस छोटे-से वाक्य के सामने एक अंतहीन भाषा को फैलाने के बावजूद , मैं वहीं रहूंगा । उसी गाढ़े और कोलतार में ।" [88]

इन शैलियों के अतिरिक्त "रमौलिया शैली", "लोककथात्मक शैली", "शब्द-सह-चयन" और "प्रसंग-सह-चयन" जैसी शैलियां मटियानीजी में मिलती हैं। दूसरे सभी लेखकों में विभिन्न प्रकार की शैलियों के अलावा एक "लेखकीय शैली" भी होती है। शैलेश मटियानी के उपन्यासों में भी हमें "लेखकीय शैली" के दर्शन अनेक स्थानों पर होते हैं। जहां लेखकीय विश्लेषण, लेखकीय चिंतन, किसी पात्र या प्रसंग के संदर्भ में लेखकीय टिप्पणियाँ आदि होते हैं; वहां लेखकीय शैली का समावेश होता है। यह लेखकीय शैली लेखक की पहचान भी है।

निष्कर्ष :

अध्याय के समग्राकलन से हम निम्नलिखित निष्कर्ष तक सहजतया पहुंच सकते हैं :--

(1) मटियानीजी की भाषा-शैली पर दो दृष्टियों से विचार किया जा सकता है -- (अ) मटियानीजी के उपन्यासों में उपलब्ध नवीन भाषा-शिल्प, और (ब) मटियानीजी के उपन्यासों में प्रयुक्त विभिन्न भाषा-शैलियों का अध्ययन।

(2) प्रथम के संदर्भ में विचार करने पर उनके उपन्यासों में हमें नये शब्द-रूप, नये क्रिया-रूप, नये उपमान, नये विशेषण, नये रूपक, नयी भाषाभिव्यंजना की उपलब्धि होती है। भाषा की यह नव्यता दो स्तरों पर लक्षित की जा सकती है। एक स्तर वह है जहां कुमाऊंनी बोली के कारण हिन्दी की शब्द-संपदा में इज़ाफा हुआ है। दूसरे स्तर पर जहां नगरीय परिवेश है वहां यह नव्यता नये उपमान, नये रूपक, नये विशेषण के रूप में पायी जाती है।

(3) मटियानीजी के उपन्यासों में मुहावरों और कहावतों का प्रयोग परिवेश के अनुसार हुआ है। ग्रामभित्तीय

उपन्यासों में कहावत और मुहावरे कुमाऊं-परिवेश के अनुरूप हैं, तो नगरीय परिवेश के उपन्यासों में कुछ नये मुहावरों और कहावतों को देखा जा सकता है।

{4} मटियानीजी के उपन्यासों में जो विभिन्न प्रकार की शैलियां प्राप्त होती हैं उनको हम चार प्रकार की कोटियों में वर्गीकृत कर सकते हैं — {क} सैद्धान्तिक दृष्टि से शैली के प्रकार, {ख} उपन्यास के रूपबन्ध के आधार पर, {3} परिवेश के आधार पर और अन्य आधारों की दृष्टि से शैली के प्रकार।

{5} सैद्धान्तिक दृष्टि से शैली के निम्नलिखित भेद हो सकते हैं —1. मधुर शैली, 2. सरस शैली, 3. विदग्ध शैली, 4. व्यास शैली, 5. समास शैली, प्रौढ़ि शैली, 7. धारा शैली और 8. तरंग शैली ; उपन्यास के रूपबंध के आधार पर शैली के प्रायः छः प्रकार उपलब्ध होते हैं — 1. पनोरमिक शैली, 2. सरितोपम शैली, 3. दृढ़ और शिथिल गठन शैली, 4. विषयाधिक्य और विषयाल्पत्व वाली शैली, 5. आत्मसंभाषणात्मक शैली और व 6. लोककथात्मक शैली ; परिवेश के आधार पर शैली के प्रायः निम्नलिखित चार भेद मटियानीजी के उपन्यासों में मिलते हैं — 1. कुमाऊं की लोकबोली वाली शैली, 2. नगरीय परिवेश की आम-फहम शैली, 3. बम्बइया बोली वाली शैली और उxxx 4. उस्तादों तथा भंगिडियों की शैली ; अन्य आधारों पर शैली के जो प्रकार हो सकते हैं उनमें 1. लोकगीत शैली, 2. कविता के उद्धरण वाली शैली, 3. चेतनाप्रवाह शैली तथा 4. एब्सर्ड शैली आदि मुख्य हैं।

{6} उपर्युक्त सभी प्रकार की शैलियां हमें मटियानीजी के उपन्यासों में मिलती हैं। और उसकी सोदाहरण पुष्टि भी हमने यहां की है।

=== XXX ====

:: संदर्भानुक्रम ::

भूमिका ,

§1§ द्रष्टव्य : हवलदार :x§x पृ. क्रमशः 1, 1, 3, 6, 13, 13, 14, 14, 14, 14, 15, 15, 15, 15, 16, 17, 22, 29, 2, 14, 22, 22, 29, 50, 51, 52, 52, 53, 53, 56, 59, 61, 70, 71, 72, 73, 74, 75, 75, 76, 76, 77, 77, 79, 81, 81, 83, 87, 89, 90, 91, 105, 105, 106, 106, 111, 123, 127, 127, 127, 128, *88* 131, 133, 133, 134, 146, 152, 153, 158, 158, 166, 168, 168, 171, 172, 175, 184, 199, 211, 211, 213, 214, 214, 218, 219, 223, 225, 226, 229, 236, 236, 239, 242, 243, 244, 245, 248, 258, 2600265, 272, 277, 280, 283, 291, 295, 311, 311, 321, 324, 347, 356, 358 ।

§2§ द्रष्टव्य : चौथी मुट्ठी : पृ. क्रमशः 3, 4, 4, 4, 4, 6, 6, 8, 8, 13, 12, 14, 15, 22, 29, 31, 34, 34, 42, 42, 42, 49, 79, 80, 83, 107, 133, 134 ।

§3§ द्रष्टव्य : एक मूठ सरसों : पृ. क्रमशः 1, 2, 2, 2, 3, 4, 88×8×8× 6, 7, 7, 10, 18, 29, 34, 37, 37, 39, 43, 45, 47, 71, 73, 82, 12 ।

§4§ द्रष्टव्य : नागवल्लरी : पृ. क्रमशः 16, 32, 52, 53, 77, 82, 125, 126, 150, 164, 168, 194, 217, 219 ।

§5§ द्रष्टव्य : गोपुली गफूरन : पृ. क्रमशः 16, 18, 20, 20, 20, 21, 32, 38, 54, 81, 105 ।

§6§ द्रष्टव्य : जलतरंग : पृ. क्रमशः 16, 39, 69, 72, 84, 84, 89, 19 ।

§7§ द्रष्टव्य : बर्फ गिर चुकने के बाद : पृ. क्रमशः 22, 24, 29, 28, 28, 40, 44, 54, 57, 74, 74, 91, 91, 97, 98, 99 ।

§8§ द्रष्टव्य : रामकली : पृ. क्रमशः 56, 56 ।

§9§ द्रष्टव्य : छोटे छोटे पक्षी : पृ. क्रमशः 6, 23, 41, 95, 167, 189, 190, 228, 234, 245, 255, 261, 269, 277, 278 ।

§10§ द्रष्टव्य : चंद औरतों का शहर : पृ. क्रमशः 10, 28, 30, 43, 64, 74, 82, 87, 94, 96, 99, 103, 104, 113, 114, 118, 161, 75, 83, 110, 178 ।

§11§ एक मूठ सरसों : पृ. क्रमशः 11, 11, 22, 30, 30, 32, 33, 34, 36, 36, 38, 38, 39, 41, 41, 43, 53, 59, 61, 63, 64, 65, 75, 75, 82, 95 ।

§12§ चौथी मुट्ठी : पृ. क्रमशः ~~88~~ 3, 3, 5, 13, 14, 33, 32, 49, 50, 56, 59, 62, 64, 68, 76, 76, 77, 80, 129 ।

§13§ हौलदार : पृ. क्रमशः 5, 20, 29, 87, 102 ।

§14§ द्रष्टव्य : जलतरंग : पृ. क्रमशः 8, 12, 14, 17 ।

§15§ द्रष्टव्य : रामकली : पृ. क्रमशः 25, ~~72~~ 32, 76 ।

§16§ द्रष्टव्य : नागवल्लरी : पृ. क्रमशः 10, 32, 100, 105, 195 ।

§17§ द्रष्टव्य : चन्द औरतों का शहर : पृ. क्रमशः 75, 83, 110, 125, 174, 169, 178, 234, 187 ।

§18§ द्रष्टव्य : बर्फ गिरचुकने के बाद : पृ. क्रमशः 11, 12, 14, 18, 19, 26, 26, 39, 39, 49, 57, 58, 64, 74, 77, 95, 97, 100, 107, ।

§19§ द्रष्टव्य : चन्द औरतों का शहर : पृ. क्रमशः 17, 19, 32, 40, 45, 47, 50, 69, 85, 85, 89, 89, 110, 110, 124, 125, 127, 128, 130, 142, 164, 165, 174, 205, 214, 230, 249, 267, 271 ।

§20§ द्रष्टव्य : वर्फ गिर चुकने के बाद : पृ. क्रमशः 12, 12, 13, 13, 14, 15, 17, 20, 22, 26, 29, 30, 32, 34, 44, 49, 73, 72, 74, 74, 76, 76, 78, 79, 80 ।

§21§ द्रष्टव्य : आकाश कितना अनंत है : पृ. क्रमशः 9, 23, 42, 92, 131, 137, 137, 150, 159, 175, 189 ।

§22§ द्रष्टव्य : छोटे छोटे पक्षी : पृ. क्रमशः 13, 19, 43, 77, 82, 104, 108, 109, 114, 120, 123, 149, 156, 160, 165, 165, 181, 191, 230, 240. 245, 262, 277 ।

§23§ द्रष्टव्य : जलतरंग : पृ. क्रमशः 8, 15, 16, 16, 20, 21, 27, 30, 32, 33, 56, 73, 35, 37, 40, 42, 100, 100 ।

§24§ द्रष्टव्य : किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई : पृ. क्रमशः आमुख - 1, 2, 2, 3, 3, 4, 4. उपन्यास : 1, 2, 9, 14, 20, 27, 30, 35, 45, 47, 67, 90, 94 ।

§25§ द्रष्टव्य : हौलदार : पृ. क्रमशः 4, 4, 22, 30, 44, 46, 47, 48, 50, 53, 54, 71, 82, 102, 126, 133, 140, 152, 175, 192, 205, 211, 216, 218, 219, 243, 246, 248, 252, 265, 265, 276, 280, 359 ।

§26§ द्रष्टव्य : एक मूठ सरसों : पृ. क्रमशः 2, 3, 3, 5, 5, 14, 18, 21, 23, 29, 31, 33, 38, 38, 52, 63, 74, 75, 77, 83, 83 ।

§27§ द्रष्टव्य : चौथी मुट्ठी : पृ. क्रमशः 5, 14, 38, 57, 58, 68, 75, 75, 76, 77, 79, 80, 81, 81, 81, 86, 86, 107, 126, 133, 136, 143 ।

§28§ द्रष्टव्य : नाग वल्लरी : पृ. क्रमशः 11, 30, 42, 42, 51, 71, 72, 76, 79, 81, 120, 162, 178, 180, 182, 191, 195, 200, 215, 223 ।

§29§ द्रष्टव्य : गोपुली गफूरन : पृ. क्रमशः 18, 38, 106, 107, 108, 113, 117 ।

§30§ द्रष्टव्य : रामकली : पृ. क्रमशः 40, 49, 84, 93 ।

§31§ द्रष्टव्य : छोटे छोटे पक्षी : पृ. क्रमशः 214, 236, 245, 249, 255, 235, 156 ।

§32§ द्रष्टव्य : चन्द औरतों का शहर : पृ. क्रमशः 11, 41, 53, 55, 92, 104, 111, 136, 149, 178 ।

§33§ द्रष्टव्य : मुख सरोवर के हंस : पृ. क्रमशः 1, 9, 10, 10, 14, 34, 69, 69, 86, 95, 121, 122 ।

§34§ द्रष्टव्य : आकाश कितना अनंत है : पृ. क्रमशः 41, 43, 198 ।

§35§ द्रष्टव्य : एक मेठ सरसों : पृ. क्रमशः 5, 5, 11, 11, 25, 28 ।

§36§ द्रष्टव्य : हौलदार : पृ. क्रमशः 24, 47, 71 ।

§37§ द्रष्टव्य : किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई : पृ. क्रमशः 12, 14, 16, 17, 24, 31, 45, 48, 85 ।

§38§ द्रष्टव्य : बोरीवली से बोरीबन्दर तक : पृ. क्रमशः 32, 32, 32, 59, 59, 70, 74, 75, 82, 100, 100, 118, 144 ।

§39§ द्रष्टव्य : चौथी मुट्ठी : पृ. क्रमशः 48, 50, 58, 61, 77, 80, 81, 87, 139, 150 ।

§40§ द्रष्टव्य : माया सरोवर : पृ. क्रमशः 20, 21, 36, 42, 58, 59, 59, 63, 79, 79, 109, 150 ।

§41§ द्रष्टव्य : बर्फ गिर चुकने के बाद : आरंभ - 2, 2, उपन्यास : 13, 15, 20, 26, 39, 51, 54, 54, 72, 85, 87, 105 ।

§42§ ये मुहावरे हमने प्रायः उनके सभी उपन्यासों से छांटकर यहां उद्धृत किए हैं ।

§43§ द्रष्टव्य : बर्फ गिर चुकने के बाद : पृ. क्रमशः 22, 27, 54, 62 ।

§44§ द्रष्टव्य : नागवल्लरी : पृ. क्रमशः 74, 95, 98x 94, 97, 117, 149, 159, 158, 184, 187, 187 ।

§45§ द्रष्टव्य : छोटे छोटे पक्षी : पृ. क्रमशः 5, 5, 15, 25, 32, 33, 149, 212, 246, 256 ।

§46§ द्रष्टव्य : आकाश कितना अनंत है : पृ. क्रमशः 35, 85, 84, 85, 85, 108, 159, 193 ।

§47§ द्रष्टव्य : हौलदार : पृ. क्रमशः 5, 27, 45, 49, 59, 62, 79, 98, 104, 227, 256, 285, 309, 323 ।

§48§ द्रष्टव्य : गोपुली गफूरन : पृ. क्रमशः 28, 33, 92 ।

§49§ द्रष्टव्य : मुख सरोवर के हंस : पृ. क्रमशः 10, 11, 65, 69, 73, 94, 121 ।

§50§ द्रष्टव्य : एक मूठ सरसों : पृ. क्रमशः 32, 44, 62, 28, 2 ।

§51§ द्रष्टव्य : चिट्ठीरसैन : पृ. क्रमशः 179, 107, 108, 100, 13, 14, 12 ।

§52§ द्रष्टव्य : चौथी मुट्ठी : पृ. क्रमशः 66, 126, 190, 187, 187, 187 ।

§53§ द्रष्टव्य : समीक्षायण : पृ. 54-55 ।

§54§ द्रष्टव्य : वही : पृ. 55 ।

§55§ द प्रोब्लेम आफ स्टायल ।

§56§ माया सरोवर : पृ. 74 ।

§57§ आकाश कितना अनंत है : पृ. 314 ।

§58§ वही : पृ. 226 ।

§59§ वही : पृ. 250 ।

§60§ वही : पृ. 94-95 ।

§61§ चिंतामणि भाग-1 : पृ. 61 ।

§62§ [illegible]

§62§ बोरीवली से बोरीबन्दर तक : पृ. 32-33 ।

§63§ चिन्तामणि भाग-1 : पृ. 29 ।

§64§ द्रष्टव्य : इसी प्रबंध में : पृ. 195-196 ।

§65§ माया सरोवर : पृ. 59 ।

§66§ उगते सूरज की किरन : पृ. 25-26 ।

§67§ बर्फ गिर चुकने के बाद : पृ. 48-49 ।

§68§ द्रष्टव्य : हिंदी उपन्यास साहित्य का अध्ययन : डा. एस.एन. गणेशन : पृ. 148-152 ।

§69§ ज्होन क्रिस्टोफर : गिलबर्ट केनन्स प्रिफेस : पृ. 4 ।

§70§ वही : पृ. 5 ।

§71§ तादर्थ्य : गुजराती त्रैमासिक : दीपोत्सवी अंक : लेख : ज्होन क्रिस्टाफर : कृष्णवदन जेटली : पृ. 14 ।

§72§ हिन्दी उपन्यास पर पाश्चात्य प्रभाव : डा. भारतभूषण अग्रवाल : पृ. 177 ।

§73§ बर्फ गिर चुकने के बाद : पृ. 68 ।

§74§ मुख सरोवर के हंस : पृ. 84-85 ।

§75§ हौलदार : पृ. 255-256 ।

§76§ वही : पृ. 256-257 ।

§77§ वही : पृ. 257 ।

§78§ वही : पृ. 4 ।

§79§ वही : पृ. 339-340 ।

§80§ बोरीवली से बोरीबन्दर तक : पृ. 127–128 ।

§81§ किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई : पृ. 58–59 ।

§82§ वही : पृ. 59 ।

§83§ वही : आमुख से : पृ. 3–5 ।

§84§ हौलदार : पृ. 21 ।

§85§ वही : पृ. 136 ।

§86§ वहीxxxxपृxx बर्फ गिर चुकने के बाद : पृ. 71–72 ।

§87§ वही : पृ. 70 ।

§88§ वही : पृ. 11–12 ।

====== xxxxxx =======

Date :

: सप्तम् अध्याय :

: उपसंहार :

:: सप्तम् अध्याय ::

: उपसंहार :

" अपारे काव्य-संसारे कविरेव प्रजापतिः " — इस अपार काव्य-संसार में कवि ही एक मात्र प्रजापति या ब्रह्मा है । यहाँ "कवि" शब्द का प्रयोग उसके व्यापक अर्थ में हुआ है । "कवि" अर्थात् "कविता लिखने वाला " ही नहीं , काव्य या साहित्य की रचना करने वाला प्रत्येक कलाकार "कवि" कहलाने का अधिकारी है । ध्यान रहे हमारे यहाँ काव्य शब्द साहित्य का ही समानार्थी है । और इस व्यापक अर्थ में मटियानीजी सचमुच में एक बहुत बड़े कवि , एक प्रजापति हैं , जिनका एक व्यापक और विराट रचना-संसार है । अपने अंतिम दिनों में वे अक्सर कहा करते थे कि एक "बृहद् रचना " उनके भीतर पकी पड़ी है । अंतिम दशक में उनका

[stamp]

दुःख जो बहुगुणित हो गया था , उसका एक मुख्य कारण यह था कि वे अपनी इस "बृहद रचना" को जन्म नहीं दे सके , शब्द नहीं दे सके । इसको यदि वे जन्म दे पाते उनके रचना-संसार की क्या व्यापकता और विराटता होती , यह तो कहा नहीं जा सकता , किन्तु जैसा भी और जितना भी उनका रचना-संसार हमारे सामने है उसका ओर-छोर पाना भी , हमारे लिए बड़ा मुश्किल है ।

सन् 1950 से उनका लेखन जो शुरू हुआ तो जीवन की अंतिम सांसों तक , अर्थात् 24 अप्रैल 2001 तक वह लगातार चलता रहा । आखिर-आखिर में भी "हंस" में उनकी एक-दो कहानियां प्रकाशित हुई थीं । मटियानीजी को निकट से जानने वाले इस तथ्य या सत्य को भलीभांति जानते हैं कि यह "अपराजेय आस्था " का स्वामी , अपने अंतिम वर्षों में बुरी तरह से टूट गया था । अंतिम दश वर्षों में उन्हें पुरस्कार और पैसे मिले । वे अत्यन्त भ्रष्ट प्रकार की सरकारों से सहायता लेते रहे । उनके अंतिम पत्रों से भी यह ज्ञात होता है कि आखिर-आखिर में पुरस्कारों में सिर्फ पैसा देख रहे थे । जिस अलमोड़े और मुंबई के तमाम अपमानों तथा दिल्ली तथा इलाहाबाद के सतत संघर्षों ने जिसे "शैलेश" बनाया था , वह "शैलेश" मानो टूट गया था ।

मटियानीजी की स्कूली शिक्षा बहुत मामूली-सी थी । किन्तु मटियानीजी के संदर्भ में ज्यादा महत्त्वपूर्ण यह है कि इतनी-सी स्कूली शिक्षा में उन्होंने अपने घर , परिवार और समाज से जो सीखा था वह किसी विश्वविद्यालयीन शिक्षा से कहीं ज्यादा था । यदि यह कहा जाय कि कुमाऊं के सामाजिक-सांस्कृतिक अनुभवों ने उनको स्नातक बनाया तो उनकी उच्च शिक्षा बम्बई , दिल्ली , इलाहाबाद , मुजफ्फरनगर तथा अन्य शहरों के फुटपाथों और ढाबों में हुई थीं । इस शिक्षा के कारण उनके पास जीवनानुभवों

का जो भण्डार हो गया था , उसका जो इस्तेमाल उन्होंने किया वह तो शायद उस समूचे का एक तिहाई भी नहीं है । उनका अनचिह्नित "आईसबर्ग" तो शायद उनके साथ ही गया । अपने समग्र जीवनानुभवों का प्रयोग वे कदाचित् किसी बड़ी रचना में करना चाहते थे । उसीके लिए वे उन अनुभवों को बचाते और छिपाते रहे । किन्तु उसे हिन्दी का दुर्भाग्य ही समझना चाहिए कि वे अनुभव साहित्य नहीं बन सके । कदाचित् यही अव्यक्त "अनुभव-खजाना" उनके अंतिम बरसों में सिर की व्याधि बन गया था । डा. शेखर पाठक जिन्होंने शैलेश मटियानी के निधन के उपरांत "पहाड़" का शैलेश मटियानी विशेषांक निकाला कहते हैं कि मृत्यु से कुछ महीने पूर्व वे उनसे कहा करते थे कि "एक बृहद रचना उनके भीतर है " और जरा भी मानसिक संतुलन लौटा तो मैं उसे शब्द-रूप दूंगा , किन्तु दुर्भाग्य कि उनके मित्रों ने उस "बृहद रचना " को उनके साथ धुआं होते देखा ।

अभिप्राय यह कि शैलेश ने जो संसार रचा है वह तो काफी विस्तृत , गहन और विराट है ; जो नहीं रच सके , उसे भी यदि रच पाते , तो स्थिति क्या होती कह नहीं पाते । लेकिन उन्होंने जो साहित्य हमें दिया है वह भी परिमाण व परिणाम दोनों दृष्टियों से महत्त्वपूर्ण है । एक बृहद् संसार देकर गये हैं वे । यहां डा. शिवकुमार मिश्र के शब्द स्मृति में बरबस कौंध रहे हैं जो उन्होंने रेणु को श्रद्धांजलि देते हुए कहा था कि ऐसे लेखक की मृत्यु होने पर ऐसा लगता है कि जैसे उनका समूचा रचना-संसार रोते हुए उन्हें अपनी श्रद्धांजलि देता हो । ऐसे लेखकों का रचना-संसार बड़ा विस्तृत होता है । एक बहुत बड़ा परिवार , एक छोटा-सा विश्व , वे अपने पीछे छोड़ जाते हैं । बिलकुल यही बात हम मटियानीजी के संदर्भ में कह सकते हैं ।

"बर्फ की चट्टानें " (बड़ा संकलन) की भूमिका में लेखक कहते हैं --" कहानी लिखना आदमी को लिखना बन जाये , तब ही माना जा सकता है कि उसे पढ़ते आदमी को ~~खुद~~ पढ़ रहे ~~होने×की~~ होने की अनुभूति हो सकेगी । तब ही जाना जा सकेगा कि आदमी के पृष्ठ अपार हैं और इस "अपार" की ओर इशारा करना ही कहानी की भूमिका बांधना है ।" इसके अंतिम वाक्य को कुछ परिवर्तन के साथ यों कहा जा सकता है -- " इस अपार की ओर इशारा करना ही लेखक का काम है । और मटियानीजी के रचना-संसार को पढ़ते हुए हमें बराबर यह अनुभव हहोता है कि हम संसार को और भी बेहतर रूप से जान रहे हैं । हमारी चेतना का विस्तार हो रहा है । हम इस रंगारंग संसार को , दुनिया को , उसके दोगलेपन को , उसके सच्चेपन को , किसी प्रेमचंद , किसी नागार्जुन , किसी रेणु , किसी मटियानी की आंखों से और भी अच्छी तरह देख सकते हैं । मटियानीजी का रचना-संसार कितना व्यापक और विराट है । यहां कोई डूंगरसिंह है जो अपने भीतरी खालीपन को भरने के लिए लम्बी-चौड़ी लंतरानियों को हांकने के लिए विवश है , इसमें खिमुली-भिमुली भौजियों के हंसी-मजाक , गीत और व्यंग्य-बाण हैं , इसमें लछिमा भौजी है जिसे ~~अपने~~ अपने बच्चों की फौज पर नाज़ है , उसमें जैंता जैसी नारियां हैं जो आंसू सारते-सारते अपनी जिन्दगी के ~~×~~ दिन कुछ सपनीली स्मृतियों के सहारे काटती हैं , इसमें कौशिला जैसी दुःखी नारियां हैं जो अपने सास, ससुर, सौत और पति के त्रास से पीड़ित होकर चितई के गोल-मंदिर में घात लगाने आती है और सास, ससुर और सौत की तीन मुट्ठियों के बाद चौथी मुट्ठी छोड़ने जाती थी कि किसी अदृश्य संस्कार-पुकार से रुक जाती है , उसमें मोतिमा मस्तानी है जो अपने बच्चों के खातिर रात को चिलमनंगी होकर और कालिख पोतकर चुड़ैल बनकर निकल पड़ती है और लोगों को चुड़ैल के आतंक से भयभीत करके छोटी-मोटी चोरियों से अपने बच्चों का

पेट पालती है , उसमें परायी बच्ची को बेटी का-सा प्यार देनेवाले नटवरसिंह जैसे लोग हैं तो दूसरी तरफ अपने दारू और जुआ के जुगाड़ के लिए पत्नी और बेटी तक को धंधा करवाने का इरादा रखनेवाले मोतिमा के पति जैसे भडुवे पति भी हैं , इसमें पुरथुली आमा जैसी बुढ़ियाएं हैं जो खुद तो कभी टूट कर दो नहीं हुई , पर दूसरों की बच्चियों को अपनी ममता का अमृत पिलाती हैं , इसमें शराबी, कबाबी, जुआरी पति और उनकी मार खातीं , लातें और घूंसे सहतीं पार्वतियां-रमौतियां हैं जो पीतांबर जैसे चिट्ठी-रसैनों से ठगी जाकर सुंयाल को अपना तन-मन सौंप देती हैं , इनमें गोपुली गफूरन जैसी मन की सांची औरतें हैं जो अपने बच्चों की खातिर गोपुली से गफूरन बनने पर विवश हो जाती हैं , इसमें डी.डी. , फादर भट्ट , मेजर सोलंकी जैसे हिन्दू ईसाई हैं ; तो दूसरी तरफ मिसेज बनबीर, मिसेज मार्था , मिसेज ग्रीनवुड , मिसेज मैठाणी , मिस गीता पाल , मिसेज शर्मा , मिसेज सक्सेना जैसी औरतों का भरा-पूरा संसार है ; उसमें लक्ष्मी जैसी बहनें हैं जो अपने बीमार भाई के लिए दो-दो , तीन-तीन रूपयों में अपने शरीर का सौदा करती हैं और रहस्य खुल जाने पर आत्महत्या कर लेती हैं ; उसमें वस्ताद और पोपट हैं ; मवाली , दादा , गुण्डे, बदमाश , वरली-मटका वाले , दारू बेचने वाले , लड़कियां सप्लाय करने वाले , कोढ़ी , लूले , लंगड़े , भिखारी , भिखारियों का भी बिजनेस करने वाले , लोग हैं ; तो दूसरी तरफ बड़े-बड़े सेठ हैं जो अपनी अप्सराओं जैसी सेठानियों को छोड़कर त्रिभुवन रोड के चक्कर काटते हैं ;, पत्नी की इज्जत पर मर मिटने-लोग हैं तो अपनी नपुंसकता के बोध से पीड़ित होकर अपनी पत्नियों की वासना-पूर्ति हेतु नये-नये नुस्खे ढूंढने वाले सेठ नगीनदास जैसे सेठ भी हैं ; इसमें वेश्याएं हैं जो किन्हीं सतियों से कम नहीं , तो इसमें सती-सावित्रियां भी हैं जिनके सामने पातुर से पातुर स्त्रियों का

पातुरपना भी पानी भरता है ; इनमें स्त्री-वेश्याएं हैं तो खद्दर का झोला लिए घुमने वाले ×××× खन्ना जैसे पुरुष -वेश्या भी हैं । संक्षेप में एक भरी-पूरी रंगारंग दुनिया है जो मटियानी के कथा-साहित्य में उपस्थित हुई है ।

यह सब हम यहां इसलिए कह रहे हैं कि इन सब पात्रों को उनके यथार्थ परिवेश के साथ चित्रित करने में मटियानीजी ने जिस भाषा को प्रयुक्त किया होगा , उस भाषा का क्या रूप रहा होगा । यह बहुतों की अभिरुचि का विषय हो सकता है । वैसे भी उपन्यासकार होने के लिए भाषा पर जबरदस्त प्रभुत्व का होना जरूरी है । क्योंकि उपन्यासको मानव-जीवन का गद्य कहा गया है । राल्फ फोक्स से लेकर ईरा वाल्फर्ट तक के आंग्ल विवेचक इस बात के पक्षधर हैं कि उपन्यास के यथार्थ को रूपायित करने के लिए उपन्यासकार को अपने पात्रों की भाषा में जाना पड़ता है । अतः इस क्षेत्र में वही सफल हो सकता है जो अपने पात्रों के संसार में रसा-बसा हुआ हो । प्रेमचन्द , नागार्जुन, रेणु की परंपरा में अब हम मटियानीजी का नाम भी जोड़ सकते हैं ।

मटियानीजी के संदर्भ में असद बरकाती का एक दोहा उद्धृत करने का मोह छोड़ नहीं पा रहे हैं —

" जीवित थे सरकार का नहीं गया था ध्यान ।
मर जाने के बाद ही घोषित किया महान ।। "

यहां सरकार के साथ हम हिन्दी के कई विद्वानों और साहित्यकारों को भी जोड़ सकते हैं जिन्होंने मटियानीजी जब जीवित थे तब उनकी भयंकर उपेक्षा की थी , पर अब मटियानीजी का नाम उभरकर आ रहा है । प्रेमचंद और रेणु के समकक्ष रखकर उनकी कहानियों और उपन्यासों को देखा जा रहा है । महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय, बड़ौदा में ~~सर्वप्रथम~~ सर्वप्रथम इस दिशा में ध्यान डा. पारूकान्त देसाई साहब का गया था । उन्होंने अपने एक प्रज्ञाचक्षु छात्र को

मटियानीजी पर विषय दिया । मटियानीजी की कहानियों के नाना आयामों को लेकर भी उन्होंने कुछ महत्त्वपूर्ण कार्य करवाये । इसे एक विडम्बना या विचित्रता ही समझना चाहिए कि समूचे गुजरात में मटियानीजी पर सबसे पहले काम करने वाले डा. सलीम व्होरा एक प्रज्ञाचक्षु छात्र हैं । इस कारण उनका तथा उनके निर्देशक देसाई साहब का तत्कालीन राष्ट्रपति महामहिम श्री वेंकटरमण द्वारा इन×इन×इन× सन्मान हो चुका है ।

मैं भी मटियानीजी के साहित्य पर आफ्रीन था और उन पर काम करना चाहता था , अतः मैंने उनके उपन्यासों की भाषा को अपना विषयांग बनाना चाहा । दूसरे विषयों की अपेक्षा यह कार्य थोड़ा कठिन है , क्योंकि जैसा हम पहले अनेक बार निर्दिष्ट कर चुके हैं मटियानीजी के रचना-संसार का दायरा या फलक बहुत विस्तृत है । उनके उपन्यासों और कहानियों के कथ्य , समस्याएं , नारी-पात्र , विमर्श इत्यादि पर कार्य करना एक बात है और उनके उपन्यासों की भाषा पर कार्य करना दूसरी बात । उसके लिए मुझे उनके उपन्यासों को कई-कई बार पढ़ना पड़ा है । उसके शब्द-शब्द को पकड़ना पड़ा है ।

प्रथम अध्याय "विषय-प्रवेश " में उसकी भूमिका को स्पष्ट करने का यत्न हुआ है । शोध-प्रबंध मटियानीजी के उपन्यासों की भाषा को लेकर है , अतः यहां प्रमुख रूप से तीनि मुद्दों की विशेष पड़ताल की है — उपन्यास , स्वयं मटियानीजी एवं उनकी औपन्यासिक भाषा । औपन्यासिक भाषा को लेकर दूसरे अध्यायों में विस्तार से बात हुई है , अतः यहां शेष दो मुद्दों पर विमर्श हुआ है । इसमें हिन्दी उपन्यास के स्वरूप विवेचन, उसकी परिभाषा , उसके व्यावर्तक लक्षण लक्षण , उसके तत्त्व इत्यादि पर विवेचन किया गया है । यहां मटियानीजी के उपन्यासों को लिया है , अतः उसके समुचित मूल्यांकन के लिए मटियानी जी के समय तक की औपन्यासिक -यात्रा को भी लक्षित किया गया है । इसी अध्याय में मटियानीजी के व्यक्तित्त्व के नाना आयामों को

विश्लेषित किया गया है , क्योंकि किसी-न-किसी रूप में लेखक का व्यक्तित्व उसकी भाषा को प्रभावित करता ही है । इसे हम कबीर, सूर , तुलसी , चन्द , जगनिक जैसे प्राचीन तथा मध्यकालीन कवियों के संदर्भ में देख सकते हैं । इधर आधुनिक काल में प्रसाद , निराला , महादेवी , पन्त , नागार्जुन , मुक्तिबोध के संदर्भ में हम इस बात को लक्षित कर सकते हैं । अतः प्रस्तुत अध्याय में मटियानीजी के जीवन-संघर्ष को भी देखा-परखा गया है । उपन्यास गद्य की विधा है अतः इस अध्याय में गद्य के विकास को भी मूल्यांकित किया गया है । उपन्यास में भाषा का विशेष महत्व है , अतः इस संदर्भ में राल्फ फोक्स महोदय तथा श्रीमती ईरा वालफर्टे के मतों की विस्तृत विवेचना की गई है । इसी संदर्भ में औपन्यासिक भाषा और यथार्थ के अन्तर्सम्बन्धों की पडताल भी की है । कई बार औपन्यासिक रूपबंध के कारण एक ही उपन्यासकार की भाषा में भाषा के विभिन्न स्तर पाये जाते हैं , ठीक ऐसे ही कई बार एक उपन्यास में भी पात्र और परिवेश के कारण भाषा के नानास्तर उपलब्ध होते हैं । इन सब मुद्दों को यहां विचाराधीन रखा गया है और सोदाहरण उन्हें स्पष्ट भी किया गया है ।

दूसरे अध्याय में भाषिक-संरचना के विशेष संदर्भ में मटियानीजी के उपन्यासों की कथावस्तु को परीक्षित किया गया है क्योंकि भाषा के गठन में उपन्यास की कथावस्तु का भी योग होता है । जैसी कथा-वस्तु होगी भाषा का रूप भी उसीके हिसाब से आयेगा । इसी अध्याय में मटियानीजी के जीवन-संघर्ष को भी दिखाया है , क्योंकि इसी संघर्ष के बीच से उनके उपन्यासों ने जन्म लिया है । प्रबंध का विषय मटियानी जी की औपन्यासिक भाषा है , अतः यहां पर उनकी कतिपय अवधारणा-ओं को भी स्पष्ट किया गया है । इतनी भूमिका के ~~पश्चात~~ हमने मटियानीजी के लगभग 20-21 उपन्यासों ~~की कथावस्तु को उसकी भाषिक संरचना के परिप्रेक्ष्य में देखा है~~ में से अलग-अलग कोटि के हिसाब से लगभग 10-12 उपन्यासोंकी भाषा पर विचार किया है ।

इन उपन्यासों में हौलदार , , मुख सरोवर के हंस , चिट्ठीरसैन , किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई , कबूतरखाना, बोरीवली से बोरीबन्दर तक , छोटे - छोटे पक्षी , आकाश कितना अनंत है , रामकली , गोपुली गफूरन , बर्फ गिर चुकने के बाद आदि मुख्य हैं । यहां हम यह देखते हैं कि समर्थ लेखकों की भाषा में भूमि, जल, अग्नि , आकाश और वायु ये पांचों तत्त्व मिलते हैं और मटियानीजी के ऊपर उल्लिखित उपन्यासों में हम इन पांचों तत्त्व की उपस्थिति देख सकते हैं । भूमि उसे आधार देती है , जल उसे प्रवाह , आकाश विस्तार और वायु उसे स्पर्श देती है । उपर्युक्त उपन्यासों में हमें भाषा के विभिन्न स्तर मिलते हैं । शुरू के तीन उपन्यासों की पृष्ठ-भूमि कुमाऊं की धरती-पार्वती है । बाद के तीन में बम्बइया परिवेश मिलता है । शेष में अन्य नगरों का परिवेश अपनी भाषा को लेकर आया है ।

तृतीय अध्याय में पात्रों के संदर्भ में मटियानी जी की औपन्यासिक भाषा को जांचा-परखा गया है । इसमें पात्र-निरूपण में भाषा का योग , क्या हो सकता है , उसे हौलदार , चिट्ठीरसैन, चौथी मुट्ठी , बोरीवली से बोरीबन्दर तक , किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई , नागवल्लरी , जलतरंग , आकाश कितना अनंत है , चन्द औरतों का शहर , बावन नदियों का संगम आदि उपन्यासों के विभिन्न स्त्री-पुरुष पात्रों की चर्चा करते हुए उनकी भाषा को विशेष रूप से लक्षित किया गया है । मिट्टी की मूर्तियां बनाने वाले जानते हैं कि जिस प्रकार की मूर्ति होती है , उसके अनुरूप मिट्टी को चुनना पड़ता है , या मिट्टी को उस प्रकार का बनाना पड़ता है । ठीक वही भूमिका भाषा की रहती है पात्र-सृष्टि की प्रक्रिया में ।

एक स्वप्नजीवी कथाकार या कलाकार होने के नाते मटियानीजी अपनी कुमाऊं की धरती को पागलपन की सीमा तक चाहते हैं , अतः चौथे अध्याय में हमने मटियानीजी के उन उपन्यासों

की भाषा को अपने अनुशीलन के निकष पर लिया है जो कुमाऊं की धरती-पार्वती की पृष्ठभूमि पर आधृत हैं । अध्याय के प्रारंभ में कुछ भाषागत प्रयोगों की बात छेड़ी गई है । उसके बाद संबंधवाची शब्द तथा कुमाऊं के रोजमर्रा के जीवन में प्रयुक्त होने वाले शब्दों पर विचार किया है । इस अध्ययन के दौरान हमने अनुभव किया है कि कुमाऊं की बोली में कुछ ऐसे शब्द हमें मिलते हैं जो यहां की ठेठ गुजराती में भी उपलब्ध होते हैं इससे वैविध्य के बावजूद ग्रामीण जीवन की एकता का अनुभव हमें हुए बिना नहीं रहता है । यहां हमने कुमाऊं की लौकिक बोली तथा कृषि-विषयक शब्दों पर भी अलग से विचार किया है, क्योंकि ग्रामीण समाज मूलतः कृषि-समाज होता है । इस अध्याय के अन्तर्गत और जिन मुद्दों को लिया गया है उनमें व्यक्तिवाची शब्द, संबंधवाची शब्द, संबोधन में प्रयुक्त होने वाले शब्द, जाति-विशेष को सूचित करने वाले शब्द, कुमाऊं के लोकदेवता और उनसे जुड़ी हुई शब्दावली, कुमाऊं प्रदेश की लोक-xxxxxx मान्यताएं, उनके अंध-विश्वास और इन सबसे जुड़ी हुई शब्दावली; कुमाऊं प्रदेश के कतिपय तीज-त्यौहार, संस्कार और उनसे संलग्नित शब्दावली, कुमाऊं प्रदेश के गालीवाची शब्द, लोकोक्तियों और कहावतों का प्रयोग आदि का समावेश है । ऊपर निर्दिष्ट किया गया है कि मटियानीजी अपनी धरती-मां को बहुत गहराई से चाहते हैं और इसीलिए उनका यह लगाव उनके "हौलदार", "मुख सरोवर के हंस", "एक मूठ सरसों" तथा "चौथी मुट्ठी" आदि उपन्यासों के रचाव में भी श्रुतिगोचर होता है । अपनी इस विशिष्ट भाषा-शैली के कारण मटियानीजी का हिन्दी कथा-साहित्य में एक विशिष्ट स्थान बना है । प्रेमचंद, रेणु, नागार्जुन के बाद अपनी जमीन से जुड़ी हुई भाषा हमें मटियानीजी के उपर्युक्त उपन्यासों में प्राप्त होती है । यहां जो भाषा है वह "लोकबोली" है और लोकबोली में लोकोक्तियों और कहावतों का प्रयोग बहुतायत से प्राप्त होता है, क्योंकि यह पुस्तकीय भाषा नहीं, बल्कि

एक धरतीपुत्र की अनुभव-पगी भाषा है । मटियानीजी की कुमाऊं की पृष्ठ-भूमि पर आधृत यह भाषा उस अंचल-विशेष की संस्कृति को रूपायित करने में पूर्णतया सक्षम है । मटियानीजी इस जन-जीवन से, यहां की मिट्टी से कितने गहरे स्तर पर जुड़े हुए हैं, उसकी प्रतीति यह भाषा करवाती है, और इसके कारण हिन्दी के विशिष्ट शैली-कारों में मटियानीजी की गणना होने लगी है ।

जिस प्रकार पात्रों के निर्माण में भाषा का योग होता है, ठीक उसी तरह परिवेश के निर्माण में भाषा का योगदान नगण्य नहीं होता है । वस्तुतः जिस प्रकार का परिवेश होगा, भाषा भी उसीके अनुरूप होगी । अतः इस पांचवे अध्याय में हमने मटियानीजी की भाषा का अनुशीलन उनके उन उपन्यासों को केन्द्र में रखकर किया है जो नगरीय पृष्ठभूमि पर आधारित हैं । इसे हमने अपनी सुविधा के लिए दो विभागों में रखा है । एक वर्ग में वे उपन्यास हैं जो बम्बइया परि-वेश को लेकर लिखे गए हैं । उन उपन्यासों में "बोरीवली से बोरीबन्दर तक ", " किस्सा नर्मदाबेन गंगूबाई " तथा " कबूतरखाना" आदि उपन्यासों की भाषा को केन्द्र में रखकर कुछ बातों को कहने की चेष्टा की गई है । यहां पर भाषा के तीन स्तर हमें प्राप्त होते हैं -- एक तो है बम्बइया भाषा , दूसरी बम्बई के दादाओं, उस्तादों और उनके चेले-चपाटियों की भाषा और भाषा का तीसरा स्तर है "लेखकीय भाषा " का जो उनके तमाम उपन्यासों में उपलब्ध होती है । बम्बइया भाषा " की अपनी खास विशेषता है । इसमें भारत की लगभग तमाम भाषा के शब्द मिल जाते हैं । महाराष्ट्र में स्थानिक लोगों की भाषा तो मराठी है, कोंकणी, गोवानीज़, गुजराती, खानदेशी आदि होती है; परन्तु ये लोग जब हिन्दी बोलते हैं तब उनकी हिन्दी का रूप प्रायः "बम्बइया" हो जाता है, जिसमें "था", "थी" के लिए "होता-होती", " ही" के लिए "च",

"वही" के लिए "वोच" , "पीछे" के लिए "पीछू" , "मेरे-तुम्हारे" के लिए "हमेरे-तमेरे" , " चाहिए" के लिए "होना" , "करेगा के लिए "करिंगा" , "बोलेगा" के लिए "बोलिंगा" , "बोलते" के लिए "बोलता" , "क्या" के लिए "काय" , "चाहिये" के लिए "पाहिजे" , "नहीं" के लिए "नको" जैसे शब्द बहुतायत से मिलते हैं । दादाओं की भाषा में इन शब्दों के अतिरिक्त अरबी-फारसी के शब्द विपुल मात्रा में मिलते हैं ।

दूसरे वर्ग में हमने उन उपन्यासों को रखा है जिनमें बम्बई को छोड़कर अन्य शहरों का परिवेश मिलता है । ऐसे उपन्यासों में "छोटे-छोटे पक्षी" , " आकाश कितना अनंत है " , " रामकली" , "चंद औरतों का शहर " , " गोपुली गफूरन" , " माया सरोवर" "बर्फ गिर चुकने के बाद " प्रभृति उपन्यासों की भाषा पर विचार किया गया है । इनमें दिल्ली , इलाहाबाद , अलमोड़ा , "नैनिताल" आदि शहरों का परिवेश उपलब्ध होता है । इन उपन्यासों में कमजकम पांच ऐसे उपन्यास हैं जिनका भाषिक-शिल्प एक विशिष्ट रूचि के पाठकों को आकर्षित कर सकता है । ये उपन्यास हैं — "आकाश कितना अनंत है " , " जलतरंग " , " माया सरोवर" , "चन्द औरतों का शहर " और "बर्फ गिर चुकने के बाद " । मटियानीजी का काव्यत्व यहां झलकता है । कोई लेखक भाषा के संदर्भ में भी कितनी ऊंचाइयों तक जा सकता है , इसके उदाहरण ये उपन्यास हैं । इससे यह ज्ञात होता है कि मटियानीजी के पास न केवल प्रेमचंद-रेणु-नागार्जुन की संवेदना और भाषा है , प्रत्युत उनके पास निर्मल वर्मा , जैनेन्द्र और अज्ञेय की भाषा भी है । बल्कि कहीं-कहीं ये इनसे भी काफी आगे निकल गए हैं ।

छठा अध्याय " मटियानीजी के उपन्यासों में नवीन भाषा-शिल्प एवं भाषा-शैली" को लेकर चलता है । इसे दो

विभागों में प्रस्तुत किया गया है — §अ§ मटियानीजी के उपन्यासों में उपलब्ध नवीन भाषा-शिल्प और §ब§ मटियानीजी के उपन्यासों में प्रयुक्त विभिन्न शैलियां । नवीन भाषा-शिल्प के अन्तर्गत नये शब्द-रूप , नये क्रिया-रूप , नये उपमान , नये विशेषण , नये रूपक , नवीन कहावतों और मुहावरों के प्रयोग , नवीन भाषाभिव्यंजना जैसे मुद्दों की सोदाहरण पड़ताल की गई है । "नये शब्द" में दो तरह के शब्द लिए गए हैं — कुमाऊं बोली के शब्द , जो अन्य भाषा-भाषियों के लिए नये हो सकते हैं और दूसरे वे शब्द जो मटियानीजी ने प्रत्येकबड़े कलाकार की नाईं व्युत्पन्न § कोइन § किए हैं । यही बात क्रियारूपों और विशेषणों पर भी लागू होती हैं । विशेषण में विशेषण विपर्यय § ट्रान्सफर्ड एपि-थेट § नामक पाश्चात्य अलंकार और विशेषण पदबंध वाले शब्दों को भी कहीं-कहीं लिया है । लगभग 160 जितने नये उपमान हमने मटियानीजी के विभिन्न उपन्यासों से छानकर निकाले हैं । मटियानीजी की एक और विशेषता को भी हमने यहां रेखांकित किया है । वे कई बार कुछ व्यक्तिवाची कहावतों का इस्तेमाल करते हैं । कई बार तो वे इस प्रकार की कहावतों को व्युत्पन्न करते हैं । यथा ":- "गंगासिंह गया तो सही मगर हरकसिंह के हक का हलवा छोड़कर " ।

§ब§ विभाग में मटियानीजी के उपन्यासों में प्रयुक्त विभिन्न शैलियों का वैज्ञानिक दृष्टि से विवेचन एवं विश्लेषण किया गया है । इसे चार श्रेणियों में विभक्त किया है — §1§ सैद्धान्तिक दृष्टि से , §2§ उपन्यास के रूपबंध के आधार पर , §3§ परिवेश के आधार पर और §4§ अन्य आधारों की दृष्टि से । मटियानीजी के उपन्यासों में सैद्धान्तिक दृष्टि से निम्नलिखित शैलियां पाई जाती हैं —मधुर शैली , सरस शैली , विदग्ध शैली , व्यास शैली , समास शैली , प्रौढ़ि शैली , धारा शैली और तरंग शैली । उपन्यास के रूपबंध के आधार पर जो शैलियां मटियानीजी में मिलती हैं वे इस प्रकार हैं — पनोरमिक शैली , सरितोपम शैली , दृढ़ और शिथिल गठन

की शैली , विषयाधिक्य और विषयाल्पत्व वाली शैली , आत्मसंभाषणात्मक शैली और लोककथात्मक शैली । परिवेश की दृष्टि से जो शैलियां मिलती हैं वे इस प्रकार हैं — कुंमाऊं की लोकबोली वाली शैली , नगरीय परिवेश की आम-फ़हम शैली , बम्बइया भाषा वाली शैली तथा बम्बई के दादाओं , उस्तादों और भैंगेडियों की शैली । अन्य आधारों से जो शैली के प्रकार बन सकते हैं उनमें हमने लोकगीत शैली , कविता के उद्धरण वाली शैली , चेतनाप्रवाह शैली तथा एब्सर्ड शैली को समन्वित किया है ।

मटियानीजी पर हमारी अपनी युनिवर्सिटी में दो-चार काम हुए हैं , पर उनके विषयांग अलग है । मटियानीजी जैसे बड़े माद्दे के लेखकों पर कई-कई दृष्टि से विमर्श हो सकता है । इस क्षेत्र में अभी अनंत संभावनाएं पड़ी हैं । मटियानीजी ने कथा-साहित्य के अतिरिक्त "जनता और साहित्य " , "लेखक की हैसियत से " , "मुख्यधारा का सवाल " , "यदा-कदा " , " त्रिज्या " , "राष्ट्रभाषा का सवाल " जैसे ग्रन्थ दिए हैं जिनमें उन्होंने अनेक राष्ट्रीय एवं सामाजिक-सांस्कृतिक मुद्दों को उठाया है । इस तरह उनके समग्र साहित्य को लेकर कार्य हो सकता है । उनके उपन्यासों , कहानियों तथा अन्य ग्रन्थों में उनकी कई सामाजिक, राजनीतिक , सांस्कृतिक , साहित्यिक अवधारणाएं मिलती हैं । इन अवधारणाओं को लेकर भी कोई चाहे तो शोध-कार्य हो सकता है । उपन्यासों की भांति उनकी कहानियों की भाषा को लेकर भी कार्य हो सकता है । इस तरह मटियानीजी अनंत ~~संभावनाओं~~xx संभावनाओं को जगाने वाले साहित्यकार हैं । उनकी जो रचना-प्रक्रिया है उसे संकेतित करने वाली समकालीन कवि अरुण कमल की निम्नलिखित कविता को उद्धृत करने का मोह -संवरण नहीं हो पा रहा है —

" जो आदमी दुःख में है / वह बहुत बोलता है / बिना बात के बोलता है / वह कभी चुप स्थिर बैठ नहीं सकता /

जरा-सी हवा लगते फेंकता लपट / बकता है लगातार / ईंट के भट्ठे-सा धधकता / जो सुखी संपन्न है / संतुष्ट है / वह कम बोलता है / काम की बात बोलता है / जो जितना ही सुखी है उतना ही कम बोलता है / जो जितना ताकतवर है उतना ही कम / वह लगभग नहीं बोलता है / हाथ से इशारा करता है / ताकता है और चुप्प रहता है / जिसके चलते चल रहा है युद्ध / कट रहे हैं लोग / उसने कभी किसी बन्दूक की घोड़ी नहीं दाबी ।"

— अरुण कमल

लगभग यही बात कबीर कहते हैं — " सुखिया सब संसार है खाएं और सोएं है :, दुखिया दास कबीर है जागे और रोएं । " इस संदर्भ में मेरे निर्देशक महोदय का एक शेर स्मृति में कौंध रहा है — " मिले थे गम कहीं तो हम यारो फिर संभल बैठे / मिलीं होतीं अगर खुशियां तो कितने बेजुबां होते । " मटियानीजी को जो जुबां मिली है वह भी संघर्ष की तपिश और परिस्थितियों की दबिश का परिणाम है ।

अंततः प्रबंध जैसा भी है विद्वानों के सम्मुख है । अपनी सीमाओं से मैं अनभिज्ञ नहीं हूं । क्षतियों के लिए क्षमस्व । हमारी परंपरा में कहा गया है — " वादे वादे जायते तत्त्वबोधा : " — इस न्याय से मेरा यह शोध-कार्य साहित्यिक-विमर्श को किंचित् भी गति दे सका तो मैं अपने परिश्रम को सार्थक समझूंगा ।